चन्दामामा
नवंबर १९९७
RS 6

CHANDAMAMA

भारत में सर्वाधिक बिकने वाले कामिक्स
डायमण्ड कॉमिक्स
प्राण
बिल्लू का समोसा
कार्टूनिस्ट प्राण का नटखट चरित्र बिल्लू का नया कॉमिक बिल्लू का समोसा
महाबली शाका और अजनबी हत्यारे
बेताल पचीसी-1
अग्निपुत्र अभय और खूनी जहाज
चाचा भतीजा और दानवसुर
लम्बू मोटू और आदमखोर पेड़
डायमण्ड कामिक्स डाइजेस्ट
फैण्टम-72
मैण्ड्रेक-59
जेम्स बाण्ड-62
अंकुर बाल बुक क्लब के सदस्य बनें और बचायें रु. 200/- वार्षिक
अंकुर बाल बुक क्लब घर बैठे डायमण्ड कामिक्स पाने का सबसे सरल तरीका है। आप गांव में हैं या ऐसी जगह जहाँ डायमण्ड कॉमिक्स नहीं पहुंच पाते। डाक द्वारा वी.पी.पी. से हर माह डायमण्ड कॉमिक्स के 6 नये कॉमिक्स पायें और मनोरंजन की दुनिया में खो जायें साथ ही ढेरों इनाम पायें।
हर माह छः कॉमिक्स (48/- रु. की) एक साथ मंगवाने पर 4/- रुपये की विशेष छूट व डाक व्यय फ्री (लगभग 7/-) लगातार 12 वी.पी. छुड़ाने पर 13वीं वी.पी. फ्री।
1 वर्ष में महीने | बचत (रु.) | कुल बचत (रु.)
12 — 4/- (छूट) — 48.00
12 — 7/- (डाक व्यय) — 84.00
1 — 48/- (13वीं वी.पी. फ्री) — 48.00
सदस्यता प्रमाण पत्र व अन्य आकर्षक 'उपहार', स्टिकर और 'डायमण्ड पुस्तक समाचार' फ्री 20.00
200.00
सदस्य बनने के लिए आप केवल संलग्न कूपन को भरकर भेजें और सदस्यता शुल्क के 10 रु. डाक टिकट या मनीआर्डर के रूप में अवश्य भेजें। इस योजना के अन्तर्गत हर माह 20 तारीख को आपको वी.पी. भेजी जायेगी जिसमें छः कॉमिक्स होंगी।
हाँ! मैं "अंकुर बाल बुक क्लब" का सदस्य बनना चाहता/चाहती हूं और आपके द्वारा दी गई सुविधाओं को प्राप्त करना चाहता/चाहती हूं। मैंने नियमों को अच्छी तरह पढ़ लिया है। मैं हर माह वी.पी. छुड़ाने का संकल्प करता/करती हूं।
नाम
पता
डाक
जिला
पिनकोड
सदस्यता शुल्क 10 रु. डाक टिकट/मनीआर्डर से भेज रहा/रही हूं।
मेरा जन्म दिन
नोट : सदस्यता शुल्क प्राप्त होने पर ही सदस्य बनाया जायेगा।
नई अमर चित्रकथायें
• राम की कहानी • दुर्गा की कथाएं • गुरु गोविन्द सिंह • स्वामी महर्षि दयानन्द • बाबा साहेब अम्बेडकर • छत्रसाल
• कालिदास • आजादी की कहानी • पंचतंत्र • पंचतंत्र (सियार और ढोल और दूसरी कहानियां) • जातक कथाएं
डायमण्ड कामिक्स प्रा. लि. X-30 ओखला इण्डस्ट्रियल एरिया फेज-2, नई दिल्ली-110020
महिलाओं की अपनी पत्रिका गृहलक्ष्मी

चन्दामामा

नवम्बर १९९७

एक प्रति : ६.००

वार्षिक चंदा : ७२.००

POLIO, QUIT INDIA!

Protect your child and the nation!
Participate in the mass
polio vaccination!

December 7, 1997
January 18, 1998

CALLING PARENTS!

Even if

- the child is indisposed or has diarrhoea
- the child had been given polio drops earlier

TO ENSURE CENT PER CENT PROTECTION

Remember to

Take your children (under 5) to the nearest immunisation booth / centre to receive

TWO ADDITIONAL DROPS OF THE ORAL POLIO VACCINE on National Immunisation Days

Be a part of the global Polio Eradication Campaign

You don't just have to protect, but help eradicate POLIO

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी' संचालक : बी. नागिरेड्डी

विदेशी, जो भारत के मित्र बने

भारत की स्वतंत्रता का स्वर्णोत्सव मनाते हुए, हम उन अपूर्व घटनाओं का स्मरण भी करते हैं, उन महान योद्धाओं को भी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं, जिन्होंने अपने देश की स्वतंत्रता के लिए अपने प्राणों का त्याग किया। उनकी देशभक्ति और साहस चिरस्मरणीय हैं। इनके साथ-साथ उन क्रूर, दुष्ट, दगाबाज़ विदेशियों को भी भुला नहीं सकते, जिन्होंने इनकी जान लीं और इनके परिवारों को शोक-सागर में डुबो दिया। इन घटनाओं का स्मरण करते ही हमारा हृदय इन विदेशियों के प्रति घृणा से भर जाता है, प्रतिशोध की अग्नि प्रज्वलित हो उठती है।

परंतु हमें उन पवित्र व उत्तम आत्माओं को भुलाना नहीं चाहिये, जिन्होंने विदेशी होते हुए भी हमारे देश की निस्वार्थ सेवाएँ की। उनमें से अधिकतर व्यक्ति सरकारी नौकरी करते थे। किन्तु वे भारत की संस्कृति और सभ्यता से अत्यंत प्रभावित हुए। इनमें से कुछ महान व्यक्तियों ने हमारे देश की धरोहरों, शोभाओं को खोज निकाला-जैसे सांची स्तूप, अजंता व एल्लोरा की गुफ़ाएँ। इन्होंने भारत के उत्कृष्ट ग्रंथों का अनुवाद अंग्रेज़ी में तथा अन्य विदेशी भाषाओं में किया। अलावा इनमें वे महान व्यक्ति भी हैं, जिन्होंने देश की दरिद्र व रोग-ग्रस्त प्रजा की सेवा की । देश, जाति, धर्म आदि संकीर्ण सीमाओं में वे बंध नहीं थे।

हमें समय के साथ चलना होगा। किसी एक ही काल से हमें चिपककर रहना नहीं चाहिये। इतिहास के पन्ने उलटें तो हमें मालूम होगा कि हम एक स्थिति से दूसरी स्थिति की ओर ढकेले गये हैं और घटनाएँ घटती गयी हैं। इतिहास से हमें सीखना होगा कि हमारे पूर्वजों से जिन्होंने दुर्व्यवहारकिया, उनसे घृणा न करें। उनके हम कृतज्ञ रहें, जिन्होंने हमारे पूर्वजों के साथ सद्व्यवहार किया और उनकी भलाई की।

वर्ष : ४७ नवंबर १९९७ अंक : १२

एक प्रति : रु. ६/- वार्षिक चन्दा : रु ७२/-

समाचार - विशेषताएँ
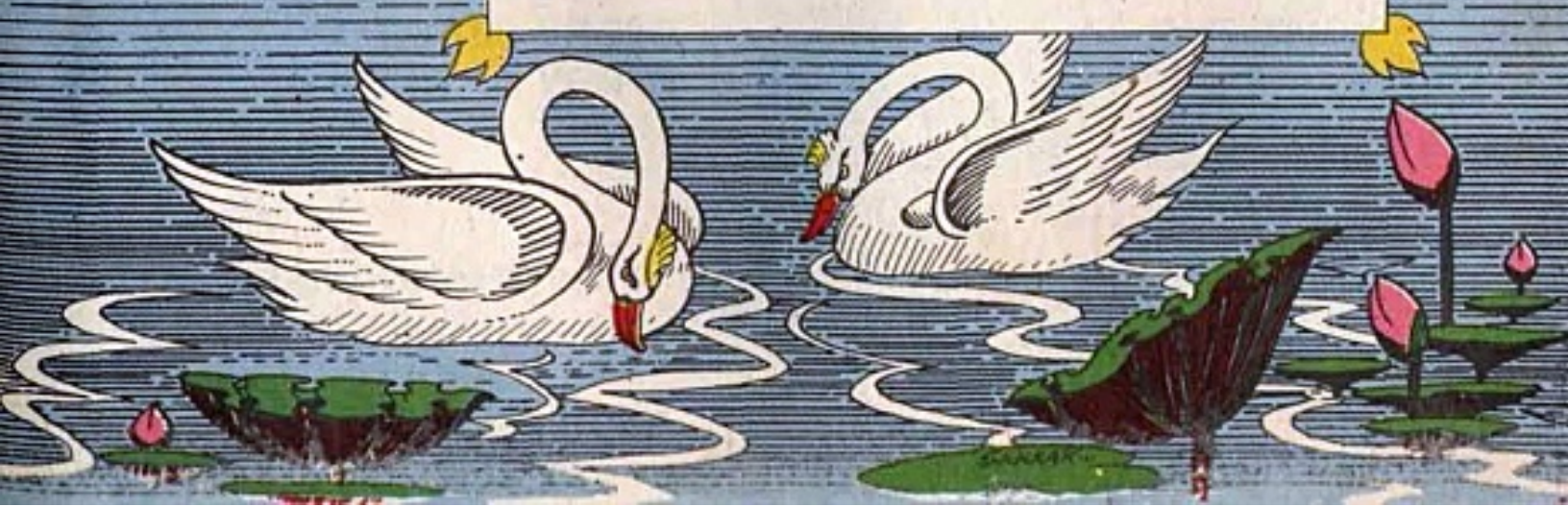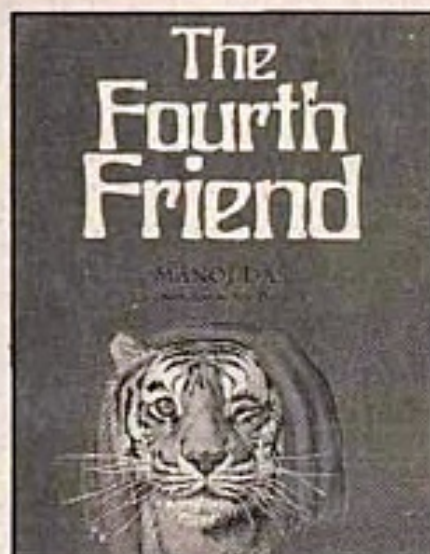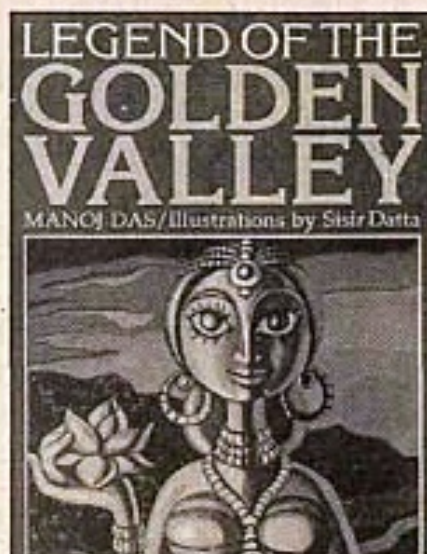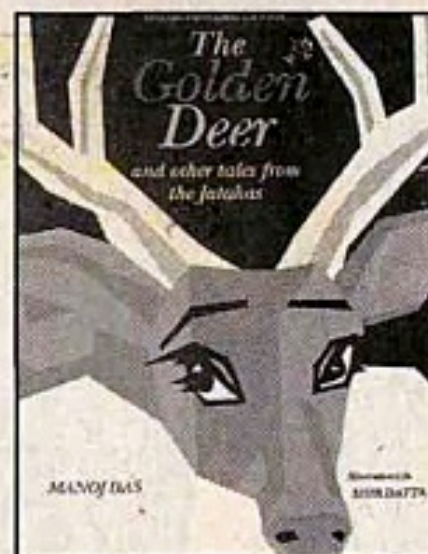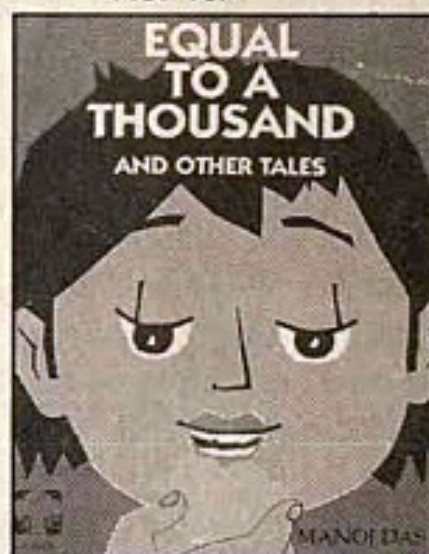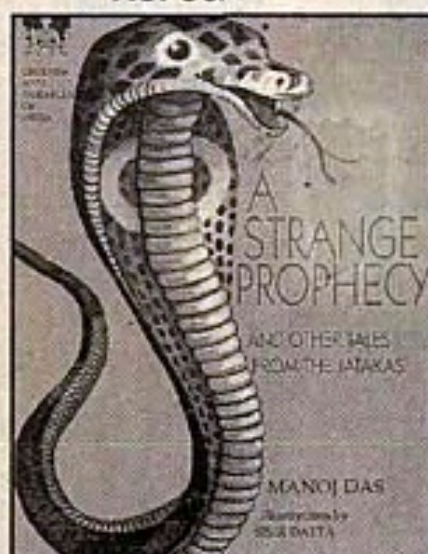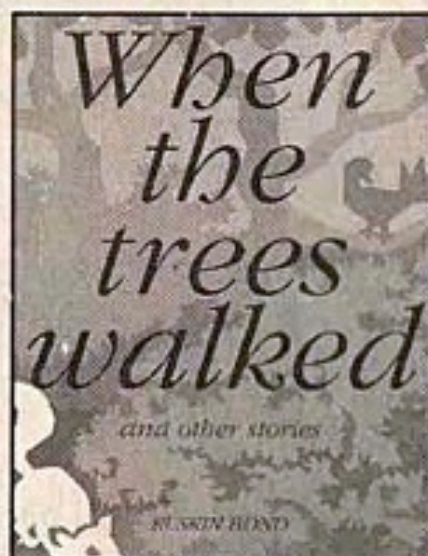
स्काटलांड का अपना संसद

१७०७ में जब से यूनियन का क़ानून अमल में आया तब से याने दो सौ नब्बे सालों से स्काटलांड, युनैटेड किंगडम का भाग बना रहा । इंग्लैड के संसद में अपने प्रतिनिधियों को भेजता था ।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद यद्यपि स्काटलांड स्वतंत्र देश नहीं था, फिर भी उस देश की जनता की अदम्य इच्छा रही कि उनका अपना संसद हो । उस समय इंग्लैड में लेबर पार्टी की सरकार थी । उनकी इच्छा के प्रति उसने सहानुभूति दिखायी । फिर भी उस समय उस दिशा में वह कुछ न कर सकी । १९७४ में जब लेबर पार्टी तीसरी बार सत्तारूढ हुई तब स्काटलांड की जनता की इच्छा पर तीव्र रूप से विचार करने लगी । १९७९ में इस विषय पर 'रेफरंडं' हुआ; प्रजा के अभिप्राय लिये गये । उस समय कन्सरवेटिव पार्टी शासन चला रही थी । उसने यह कहकर इस विषय को टाल दिया कि चालीस प्रतिशत जनता ही इस प्रस्ताव के अनुकूल है ।

पिछले मई में संपन्न आम चुनावों में फिर से लेबर पार्टी जीती और शासन संभाला । नूतन प्रधानमंत्री टोनी ब्लेयिर ने घोषणा की कि स्काटलांड में फिर से 'रिफरेंडं' होगा । उस घोषणा के अनुसार सितंबर ग्यारह तारीख को 'रिफरेंडं' हुआ । ७४.३ प्रतिशत जनता ने स्काटलांड के अपने अलग संसद के पक्ष में मत दिया । वर्तमान योजना के अनुसार १९९९ में वहाँ चुनाव होगें । २००० ई.स. तक स्काटलांड का अपना संसद गठित होगा ।

तीन शताब्दियों के पहले स्काटलांड का अपना संसद था । १३-१४ शताब्दियों में इंग्लैंड व स्काटलांड के बीच युद्ध हुआ । १३२८ में इंग्लैंड ने स्काटलांड की स्वतंत्रता को औपचारिक रूप से स्वीकार किया । किन्तु दोनों देशों के बीच सुस्थिर शांति की स्थापना नहीं हो पायी । १६३२ में स्काटलांड में विद्रोह हुआ । अंग्रेज़ जनरल क्रामवेल 'न्यू मोडल आर्मी' को अपने साथ ले गया और विद्रोह को कुचल डाला । १६६८ में स्काटलांड पर विजय पायी । १७०७ में वह इंग्लैंड का अविभाज्य अंग बन गया ।

कुछ परिशीलकों का मानना हैं कि वर्तमान अधिकार-विकेंद्रीकरण, यूनियन की विच्छिन्नता का कारण बनेगा । वे मानते हैं कि स्काटलांड का अपना संसद उस देश की स्वतंत्रता का प्रथम सोपान है ।

वहाँ विधान-सभाओं के लिए वेल्स में एक और 'रेफरेंडं' में भी हुआ ।

यहाँ के परिणामों को देखते हुए परिशीलकों का समझना है कि इस शताब्दी के अंत तक शायद यूनैटेड किंगडम विघटित हो जायेगा ।
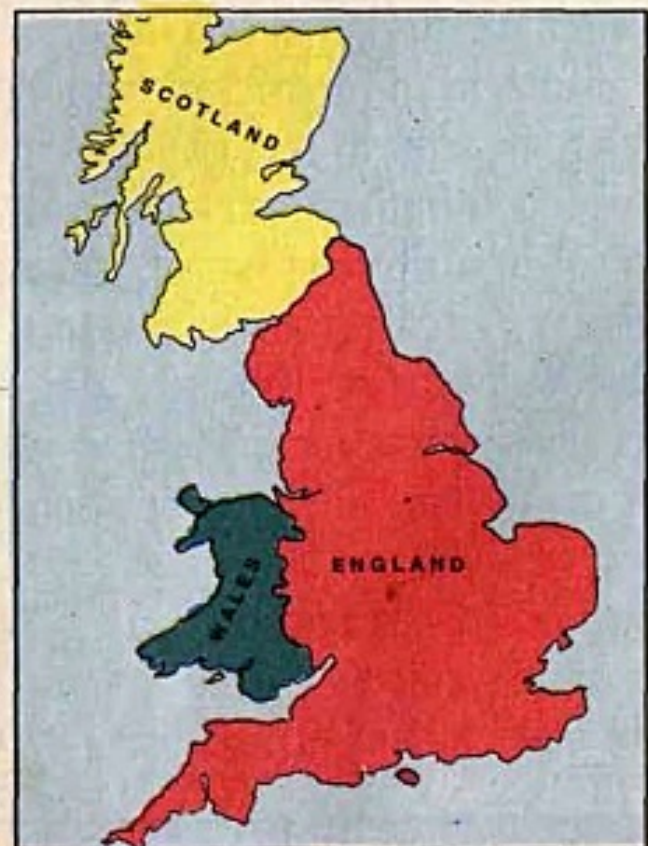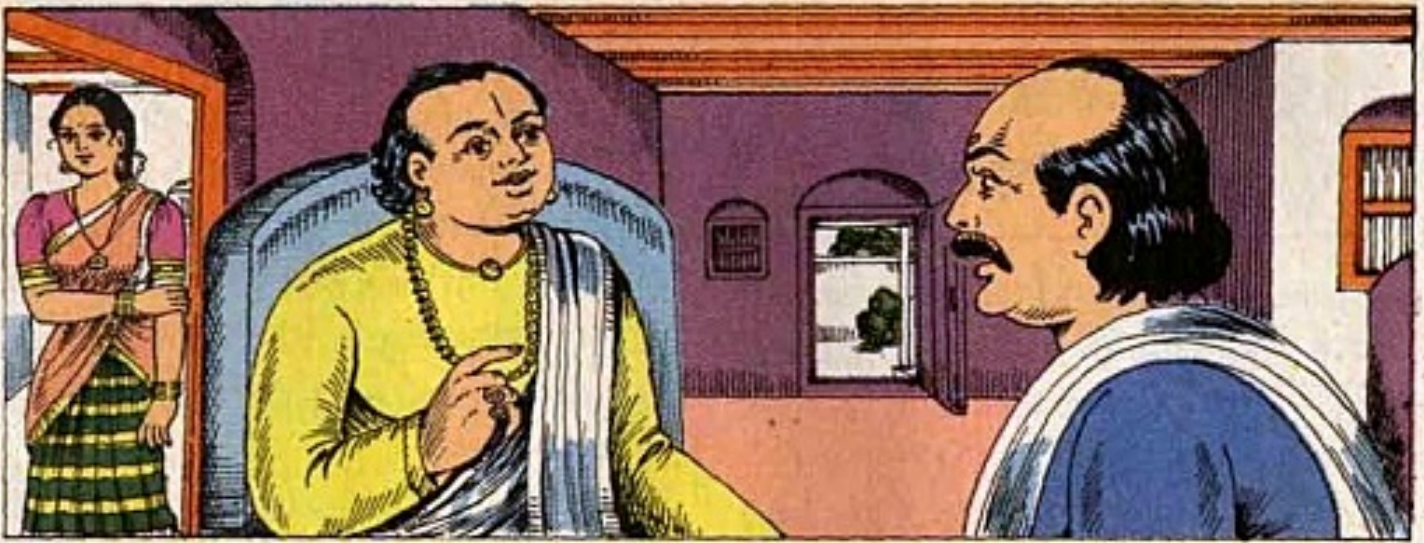
वाणीनाथ की चाह

चंद्रापुरी की ज़मींदारी में बहुत-से गाँव थे। बड़े माने जानेवाले चार-पाँच गाँवों में से मालवी अग्रहार एक था। उस अग्रहार में केशव पाँडे नामक एक पुरोहित रहा करता था। छे फुट का ऊँचा था। कानों में सोने की कुंडलियाँ लटकती रहती थीं। मुख पर तेजस्व झलकता रहता था। धडाधड़ बातें करने में पटु था, वाक्-चतुर था। इन गुणों के कारण अपनी ही ज़मींदारी में नहीं बल्कि अन्य ज़मींदारियों में भी उसका मान था, उसका अच्छा नाम था, उसकी बात का मूल्य था। किसी के भी घर में जो भी शुभ कार्य होता, पांडे ही पहले बुलाया जाता था। किसी कारण वह जा नहीं पाता तो तभी दूसरा बुलाया जाता था। कोई दान देना चाहे तो पहले पहल उसी का नाम लिया जाता था, उसी की याद की जाती थी। यों उम्र के साथ-साथ उसकी आमदनी भी बढ़ती गयी।

संपन्न केशव पांडे की संतान एक पुत्री मात्र थी। उसका नाम था शारदा। बड़ी ही सुँदर थी। सोने की गुड़िया थी। पिता से उसने शास्त्र-अध्ययन किया और माता से संगीत-ज्ञान पाया। नम्रता उसका आभूषण था। काम करने में बड़ी ही चुस्त थी।

चूँकि केशव पांडे की संपत्ति का वह एक मात्र वारिस थी, इसलिए बहुत लोग उसे अपने घर की बहू बनाने के लिए लालायित रहते थे। पांडे से रिश्ता जोड़ने के लिए तीव्र प्रयत्नों में लगे रहते थे। केशव पांडे जानता था कि लोग उससे रिश्ता जोडने के लिए क्यों इतने लालायित हैं। इसलिए उसने शर्त रखी कि उसका दामाद वही होगा, जो पौरोहित्य जानता हो, धनवान हो और हो सुँदर। उसने एक-दो से बताया भी कि ऐसे योग्य युवक से ही अपनी पुत्री का विवाह करूँगा। उसने यह भी स्पष्ट कर दिया कि वह घर-जँबाई

जयंती मिश्रा

बनकर उसी के घर में होगा। लोगों को जब पांडे की शर्तों के बारे में मालूम हुआ तो वे आपस में कानाफूसी करने लगे कि पांडे की काफ़ी इच्छाएँ हैं, काफ़ी मांगें हैं और इन्हें पूरी करना असाध्य कार्य है, तो वे चुप रह गये। इस दिशा में उन्होंने और प्रयत्न करना व्यर्थ समझा।

पांडे के अग्रहार ही के समीप के कालिंद नामक छोटे-से गाँव में उसके रिश्तेदार के यहाँ शादी होनेवाली थी। पांडे इस शुभ कार्य पर किसी कारण से जा नहीं सका, इसलिए उसने अपनी पत्नी और पुत्री को वहाँ भेजा। दुलहे की तरफ़ से वाणीनाथ नामक एक युवक भी आया हुआ था। वह विद्यासंपन्न था, परंतु धनसंपन्न नहीं था। अर्थशास्त्र में उसकी गहरी पहुँच थी। चंद्रापुरी के ज़मींदार के यहाँ नौकरी कर रहा था। उसकी माँ मात्र उसके साथ चंद्रापुरी में रहती थी। वह सहकर्मचारी दुलहा उसका निकट मित्र था।

नक्षत्रों के बीच चन्दामामा की तरह ज्योतिर्मय दिखायी देनेवाली शारदा को देखकर वह अवाक् रह गया। अब उसमें विवाह करने की इच्छा उत्पन्न हुई। उसने अपनी यह इच्छा अपने मित्र से बतायी। उस मित्र ने अपने साले से यह बात बतायी। विषय की पूरी जानकारी प्राप्त करने के बाद उसने वाणीनाथ से बताया "वह कन्या पुरोहित केशव पांडे की इकलौती पुत्री है।" साथ ही साथ उसने पांडे की शर्तों का भी विवरण दिया। बाद उसने सलाह दी कि "अच्छा इसी में है कि तुम यह बात भूल ही

जाओ। पांडे की शर्तें किसी भी स्थिति में पूरी नहीं की जा सकतीं।"

मित्र की सलाहें सुनने के बाद वाणीनाथ को भी लगा कि उसकी इच्छा का पूरा होना असंभव है। हाँ, वह थोड़ा-बहुत सुंदर है, परंतु धनवान नहीं। पौरोहित्य उसे आता भी नहीं। पांडे की और उसकी इच्छाएँ परस्पर विरोधी हैं। उनमें से किसी एक की इच्छा पूरी होनी हो तो दूसरे को अपनी इच्छा भुलानी ही होगी।

वाणीनाथ ने शारदा से विवाह रचाने की अपनी इच्छा को मन ही मन दबा लिया और चंद्रापुरी लौट गया।

कुछ समय बाद अश्वयुज मास का प्रवेश हुआ। चंद्रापुरी के दिवान में शरनवरात्री-उत्सव प्रारंभ हुए। नवरात्री उत्सवों के समाप्त

हो जाने के दूसरे ही दिन ज़मींदार भुवनचंद्र की षष्टि पूर्ति का उत्सव संपन्न होनेवाला है। ज़मींदार ने केशव पांडे को निमंत्रण भेजते हुए विनती की कि वे इस उत्सव का पौरोहित्य संभालें, सपरिवार पधारें। अपनी पुत्री व पत्नी को लेकर पांडे चार दिनों के पहले ही ज़मींदार के यहाँ आया।

उस साल, दो-तीन संदर्भों में वाणीनाथ की ईमानदारी, काम करने की उसकी पद्धति से ज़मींदार बहुत ही आकर्षित हुआ। अतः उसने वाणीनाथ को इस उत्सव का कार्य-भार सौंपा। केशव पांडे से उसका परिचय कराया। फिर उससे कहा "वाणीनाथ, अब से जब तक यह उत्सव समाप्त नहीं होता, तब तक पांडेजी के ही साथ रहो। उनसे कहे जानेवाले कार्यों की पूर्ति की जिम्मेदारी तुम्हें सौंप रहा हूँ। किसी भी हालत में उन्हें असंतुष्ट मत करो। आवश्यक खर्च के लिए दीवान तुम्हें पाँच हज़ार रुपये देंगे। यह रक़म अपने पास रखो और आवश्यकता पड़ने पर खर्च करो।"

चूँकि ज़मींदार ने वाणीनाथ के प्रति विशेष प्रेम दिखाया, इसलिए पांडे में कुतूहल जगा। दो-तीन दिनों में उसकी व्यवहार-शैली व उसकी कार्य-पद्धति को देखने के बाद उसमें जगा कुतूहल अनुराग में परिवर्तित हुआ।

वाणीनाथ ने तीसरे दिन पांडे के कहे अनुसार पूजा वेदिका तैयार करवायी। उसे ले जाकर दिखायी। पांडे ने उसकी प्रशंसा करते हुए कहा "तुमने वेदिका बहुत अच्छी बनवायी, बहुत सुंदर बनायी। मैं बहुत प्रसन्न हुआ।"

पांडे की प्रशंसा सुनकर वाणीनाथ ही नहीं बल्कि वहाँ उपस्थित राजगीर गुरुनाथ भी बहुत खुश हुआ। उसने कहा "शुभ मुहूर्त पर भगवान की पूजा करके शुरू किया गया काम बहुत ही अच्छा हुआ।"

गुरुनाथ की बात सुनते ही वाणीनाथ ने उसकी ओर मुड़ते हुए कहा "तो क्या राम के यहाँ तुमने जो काम शुरू किया, बुरे दिन पर शुरू किया? भगवान का नहीं, भूत का नाम लेकर शुरू किया ?" उसके स्वर में व्यंग्य व आक्रोश भरा हुआ था।

वाणीनाथ के इस प्रश्न से गुरुनाथ के चेहरे का रंग उड़ गया। केशव पांडे की समझ में नहीं आया कि बात क्या है ?

तब उसकी शंका को दूर करने के उद्देश्य

से वाणीनाथ ने कहा ''राम एक ग़रीब किसान है। बेचारे की चाह थी कि अपने इकलौते बेटे के लिए एक अच्छा घर बनवाकर छोड़ जाऊँ। वह गुरुनाथ का निकट रिश्तेदार भी है। घर बनवाने का काम इस गुरुनाथ को सौंपा और इससे विनती की कि अपना पारिश्रामिक थोड़ा कम करो। अच्छा होता कि यह साफ़ कह देता कि अपने पारिश्रामिक में से थोड़ा भी घटा नहीं सकता। लेकिन इसने उसकी विनती स्वीकार कर ली। पर घर बनाया अस्तव्यस्त; दोषों से भरा हुआ, टेढ़ा-मेढ़ा। राम ने जब इसका कारण पूछा तो इसने कहा ''जितनी मज़दूरी उतना ही काम।'' किन्तु ज़मींदार से अच्छे से अच्छे पुरस्कार पाने के लिए यह वेदिका तो इसने बढ़िया बनायी; सही ताप-तोल में बनायी; कोई क़सर नहीं रखी। आपकी प्रशंसा पाने के लिए दूसरा और कोई कारण बता रहा है।''

पांडे असंतुष्ट हो क्रोध-भरी आँखों से गुरुनाथ को देखते हुए कुछ कहने ही वाला था कि वाणीनाथ ने फिर कहा ''देखो गुरुनाथ, थोड़ा-बहुत पढ़े-लिखे हो। अनंत इस कालचक्र में सब दिन अच्छे ही, शुभ दायक ही होते हैं, बुरे नहीं, अशुभदायक नहीं। यह सत्य मनुष्य को बताने के लिए ही सिद्धि-विनायक ने चतुर्थी के दिन जन्म लिया, श्रीकृष्ण के रूप में अवतरित महा विष्णु ने अष्टमी के दिन जन्म लिया। किसी काम को शुरू करने अथवा उसे सुचारू रूप से पूरा करने के लिए चाहिये। चित्त-शुद्धि; पवित्र अंतःकरण। साथ ही चाहिये लगन।''

वाणीनाथ की बातें सुनकर गुरुनाथ सिर झुकाकर वहाँ से चला गया।

केशव पांडे सोच में पड़ गया। उसने पूछा
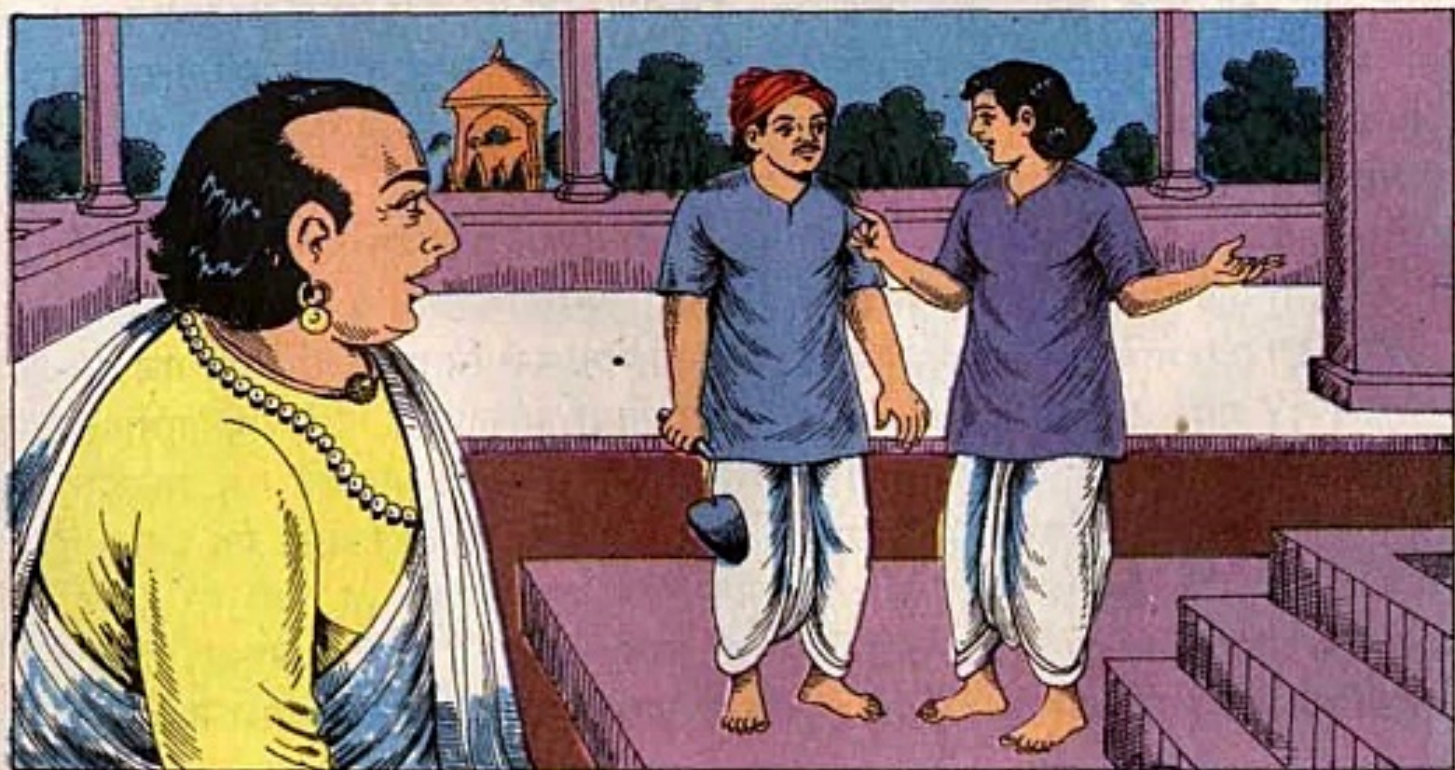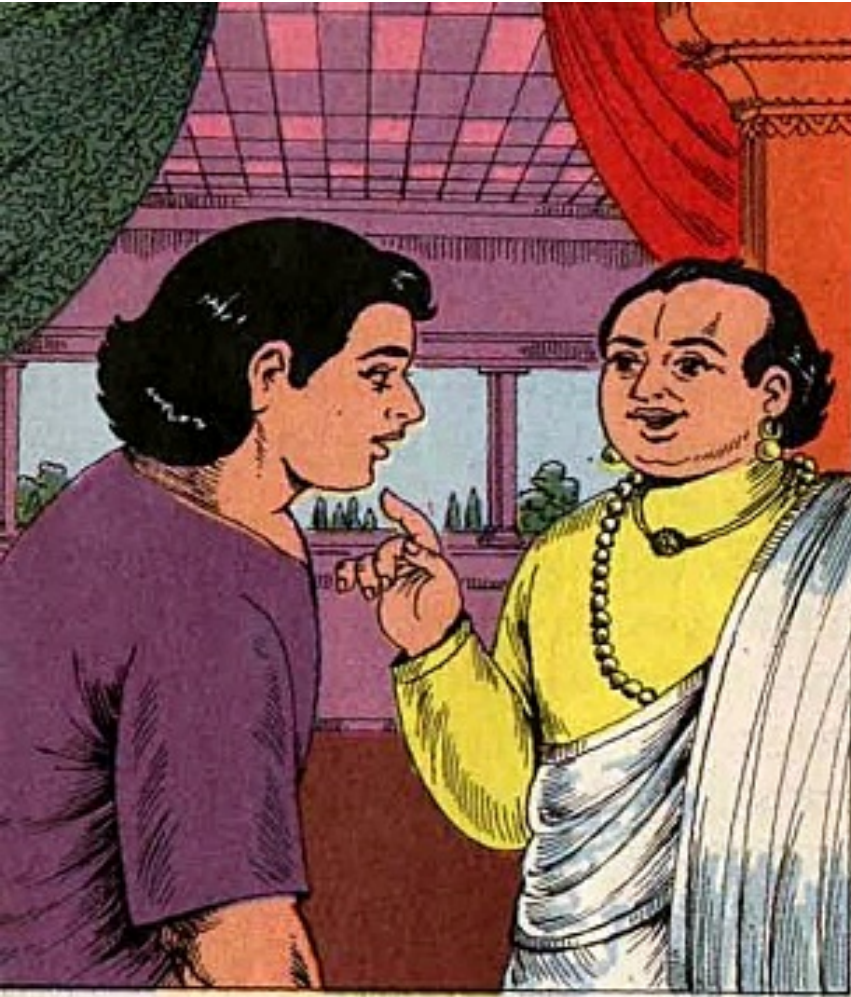
"वाणीनाथ, क्या तुम्हारा यह अभिप्राय है कि कोई भी काम किसी भी समय पर शुरू किया जा सकता है?"

एक क्षण तक मौन रहकर वाणीनाथ ने कहा "महोदय, आप गृह पुरोहित हैं। शायद मेरे विचारों से आप सहमत न हों। आपके विश्वासों पर मैंने कोई अनावश्यक टिप्पणी की हो, आपके अभिमतों पर मैंने उँगली उठायी हो, तो मुझे क्षमा कीजिये। आजकल हर व्यक्ति को हर मौके का फ़ायदा उठाने की आदत पड़ गयी है। जो भी वह काम करे, लाभ पाने की चेष्टा कर रहा है। गुरुनाथ इसका जीता-जागता उदाहरण है। ऐसी परिस्थितियों में हम जैसे शिक्षित लोगों के लिए यह बता देना आवश्यक हो गया है कि आचार-नियमों से नीति-नियम ही श्रेष्ठ हैं; भगवान भी उन्हीं का आदर करते हैं, जो अच्छे हों, निस्वार्थी हों।"

"तुमने सही बताया। मानता हूँ कि हमारे विचार एक-दूसरे के विचारों से भिन्न हैं, विरुद्ध भी हैं, उत्तर-दक्षिण ध्रुव के समान हैं, परंतु तुम्हारे विचारों का प्रभाव मुझपर पड़ा है और कुछ हद तक तुमने मुझे अपनी ओर झुका लिया है।" पांडे ने कहा।

ये बातें सुनते ही क्षण भर के लिए वाणीनाथ के मुख पर भाव-आवेश गोचर होने लगा, किन्तु वह तुरंत अदृश्य हो गया। वह तुरंत कुछ कहने ही वाला था, परंतु उसने अपने को संयमित कर लिया और चुप रह गया। केशव पांडे ने यह ताड़ लिया और पूछा "क्या बात है, वाणीनाथ? कुछ कहना चाहते थे, पर रुक गये। बताओ, क्या कहना चाहते थे?"

वाणीनाथ ने सिर झुकाकर कहा "आपने कहा कि आप पर मेरी बातों का प्रभाव पड़ा है। मैं कहना चाहता था कि मेरी इच्छा का प्रभाव भी आपकी इच्छा पर पडे तो कितना अच्छा होगा।"

पांडे ने आश्चर्य-पूर्ण स्वर में पूछा "मेरी इच्छा, तुम्हारी इच्छा, ये आख़िर हैं क्या?"

वाणीनाथ ने बिना कुछ छिपाये सब कुछ बता दिया और कहा "आपकी पुत्री हर तरह से योग्य है। आपकी वह इकलौती पुत्री है। अतः आपकी अगर यह इच्छा है कि मेरा दामाद ऐसा हो, वह घर-जँवाई हो, धनवान हो, पौरोहित्य जानता हो, तो यह ग़लत अथवा अनुचित इच्छा नहीं कही

जा सकती। आपकी इच्छा भी न्यायसंगत है।''

केशव पांडे ने हँसते हुए कहा ''तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध मेरी कोई इच्छा नहीं है।''

वाणीनाथ ने पांडे की बात पर चकित होकर कहा ''सबका यही कहना है कि आपकी बेटी इकलौती बेटी है, इसलिए अपने दामाद के बारे में आपके कुछ निश्चित व अटल विचार हैं।''

पांडे ने कहा ''एक बिटिया हो या दस-पंद्रह, हर पिता की एक ही चाह होती है। वह चाहता है कि दामाद अच्छा व योग्य हो और बेटी सुखपूर्ण जीवन बिताये। अब रही अफ़वाहों की बात। मैंने जान-बूझकर ये अफ़वाहें फैलायीं, जिससे मेरी संपत्ति से आकर्षित व्यक्ति मुझसे दूर भागें; गुड के चारों ओर मंडरानेवाली मक्खियों की तरह वे मेरे चारों ओर न घूमें और मुझे सतायें। उन्हें मुझसे और मेरी बेटी से दूर रखना पिता होने के नाते मेरा कर्तव्य है।''

वाणीनाथ ने आनंदित होते हुए कहा ''पर.... कुछ कहने ही वाला था, देखा कि पांडे की पत्नी और पुत्री शारदा वहाँ आयीं। पांडे की पत्नी ने कहा ''वेदिका देखने आयीं।''

पांडे ने हँसते हुए कहा ''विवाह-वेदिका भी तैयार हो गयी।'' उसकी बातों पर चकित पत्नी को वाणीनाथ का परिचय कराते हुए कहा ''वाणीनाथ बहुत ही चुस्त युवक है। अगर यह हमारा दामाद बने तो अच्छा होगा। कल रात को मैंने जिस युवक वाणीनाथ की बात की, वह यही है।''

फिर उसने बेटी से कहा ''बेटी शारदा, कालिंद गाँव में जब विवाह पर गयी थी तब तुमने इसे देखा था न? मैंने कल रात को जब तुम्हारी माँ के पास इस युवक के बारे में बताया तो तुम्हारी माँ कह रही थी कि तुम इसे देख चुकी हो। कह रही थी, बग़ल के कमरे से तुमने इसे झांककर देखा और शरम के मारे गड गयी; तुम्हारा चेहरा खिल उठा। तुम्हारा वह खिला चेहरा और शर्म से झुका यह चेहरा दोनों मुझे एक समान लग रहे हैं।'' होनेवाले अपने ससुर की बातों पर शर्माते हुए वाणीनाथ ने कहा ''हाँ, अब आपकी इच्छा भी जल्दी ही अवश्य पूरी करूँगा।''
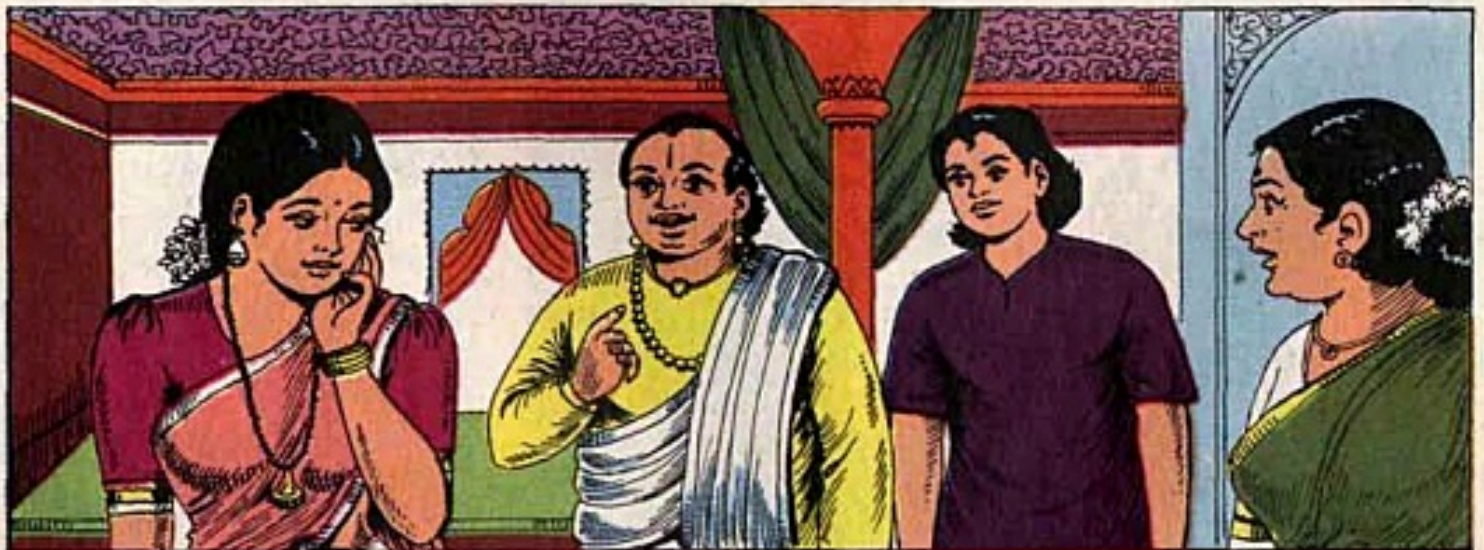
लाल्टेन - तोते का पिंजड़ा

हेलापुरी का लोकनाथ और सुगंधपुरी का निवासी वीरबाहू दोनों जिगरी दोस्त थे। दोनों एक ही लत के शिकार थे। वह थी मद्यपान। जब-जब समय मिलता, तब-तब दोनों किसी न किसी के घर मे मदिरा पीते रहते थे।

एक दिन लोकनाथ ने वीरबाहु को खबर भिजवायी ''मित्र, मेरी पत्नी मायके गयी है। घर में काफी मदिरा पडी हुई है। रात को मेरे घर आ जाओगे तो आनंद में गोतें लगाएँगे।''

वीरबाहू, लोकनाथ के घर निकला। अंधेरा था, इसलिए अपने हाथ में एक लाल्टेन लेकर निकला। उस रात दोनों ने खूब पिया। वीरबाहू लोकनाथ की अनुमति लेकर सुगंधिपुर जाने निकला।

आधी रात थी। तिसपर जंगल से गुज़रना था। गड्ढों व झाड़ियों से लाल्टेन की सहायता से अपने को बचाता हुआ घर पहुँचा। घर पहुँचने के बाद वीरबाहु घोड़े बेचकर सो गया।

सबेरा होने के पहले ही लोकनाथ का एक नौकर आया और वीरबाहू को एक ख़त दिया। उसमें लिखा हुआ था ''मित्र, आशा है कि जंगल से गुज़रते समय किसी साँप ने तुम्हें डंसा नहीं होगा और सुरक्षित घर पहुँच गये होगे। अपनी लाल्टेन यहीं भूलकर तुम चले गये। उसे भेज रहा हूँ। रात को तुम अपने साथ जो ले गये, वह था, मायके से मेरी पत्नी का लाया हुआ तोता और उसका पिंजड़ा। अच्छा हुआ, मेरी पत्नी घर पर नहीं थी, नहीं तो बखेड़ा खड़ा हुआ होता और हम पति-पत्नी अलग हो गये होते। तुम्हें साँप न डसे और मुझे अपनी पत्नी से बिछुडकर रहना न पड़े, इसके लिए आगे से हम दोनों शराब पीने की आदत छोड़ देंगे। आगे से दूर ही से शराब को सलाम।''

- श्याम पुरोहित

सम्राट अशोक

१०

(पिताश्री की आज्ञा के अनुसार अशोक उज्ञयिनी में राजप्रतिनिधि का कार्य सुचारू रूप से संभालता रहा। उसके शासन-काल में प्रजा बड़ी ही सुखी थी, उन्हें कोई शिकायत नहीं थी। मगध की राजधानी पाटलीपुत्र में राजा बिंदुसार का स्वास्थ्य बिल्कुल बिगड़ गया था। वह अपने अंतिम दिन गिन रहा था। परिस्थिति की गंभीरता को महसूस करते हुए प्रधानमंत्री, सेनाध्यक्ष तथा राजपुरोहित ने उज्ञयिनी से अशोक को, तक्षशिला से सुशेम को पाटलीपुत्र बुलाने का निश्चय किया। सुशेम की यात्रा में रुकावट डालने के लिए अशोक के मित्र यश ने दो नर्तकियों को तक्षशिला भेजा। (बाद)

अशोक अरण्य में आखेट करने गया। संध्या तक वह राजभवन लौटा और पत्नी से कहा "विदीशा, जंगल में आखेट करके मैंने बहुत जंतुओं को मार डाला। बहुत थक गया हूँ।"

"अब आप शारीरिक रूप से थक गये हैं। मैं उस दिन की प्रतीक्षा कर रही हूँ जब कि जंतुओं को मारते-मारते आप मानसिक रूप से भी थक जाएँगे।" विदीशा देवी ने कहा।

"क्यों ऐसी बातें कह रही हो देवी। तुम तो जानती ही हो कि शासन-कार्यों में व्यस्त मुझे आह्लाद पहुँचानेवाला यह विनोद-कार्यक्रम ही एकमात्र कार्यक्रम है। मैं जंतुओं का मांस खाने के लिए आखेट थोड़े ही कर रहा हूँ।" अशोक ने कहा।

"इसका यह अर्थ हुआ कि आप केवल जंतुओं को मारकर आनंद का अनुभव कर रहे हैं। उपयोग-हीन काम कर रहे हैं। यह तो और भी बुरा काम है।" विदीशा ने कहा।

''आज मैंने एक बाघ को और एक चीते को अपने बाणों का निशाना बनाया। उन दुष्ट मृगों को मारकर मैंने अच्छा ही किया। नहीं तो वे बेचारे हिरणों व खरगोशों को मार डालते और खा जाते। मैंने उन्हें मारकर जंतुओं की रक्षा की। ऐसी स्थिति में मेरे कामों को उपयोग-हीन कैसे कह सकती हो? ऐसा करके क्या मैं शक्तिहीन जंतुओं को प्राण-दान नहीं दे रहा हूँ? बलवानों से बलहीनों को बचा नहीं रहा हूँ? ऐसा करके मैं क्या अपना मानव-धर्म निभा नहीं रहा हूँ ? है न ?'' अशोक ने पूछा।

''प्रभू, बाघ, शेर आदि जंतु अपने विनोद के लिए जंतुओं को मार नहीं रहे हैं। अपनी भूख मिटाने मात्र के लिए वे उन जंतुओं को मार रहे हैं। जंतु तो नहीं जानते कि धर्म-अधर्म क्या है, बुरा क्या है और अच्छा क्या है। किन्तु मनुष्य को इसका ज्ञान है। क्रूर जंतु साधु जंतुओं को मारकर खा जाते हैं। यह उनका सहज गुण है। अगर वे ऐसा नहीं करेंगे तो वे जी नहीं सकते। अपने आहार के लिए उन्हें ऐसा करना ही पडता है। किन्तु विवेकी मनुष्यों की बात तो अलग है।'' विदीशा ने कहा।

अशोक पत्नी की बातों पर मुस्कुराता रहा, पर मौन रहा। इतने में एक परिचारिका अंदर आयी और अशोक को नमस्कार करती हुई बोली ''वारणासी से एक ज्योतिषी आये हुए हैं। वे प्रवेश-मंडप में आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।''

विदीशा ने पूछा ''ज्योतिषी?''

''हाँ देवी, मैं तुमसे कहना भूल ही गया। वे केवल ज्योतिष ही नहीं बताते बल्कि ज्योतिष में बताये गये कार्यों की सिद्धि के सुलभ मार्ग सुझाने में भी दक्ष हैं। प्रमुख व्यापारी ललितदत्त के कहे अनुसार वे यहाँ महाकाल मंदिर का दर्शन करने पधारे हैं। मैंने ही उन्हें यहाँ बुलाया था'' कहता हुआ अशोक बाहर चला गया।

अशोक को देखते ही ज्योतिषी और ललितदत्त उठकर खड़े हो गये। ज्योतिषी गेरुवे रंग के वस्त्र पहने हुए था। माथे पर कुँकुम की बिंदी थी। गले में रुद्राक्षमाला लटक रही थी।

अशोक के बैठने के बाद ज्योतिषी ने कोई मंत्र पढ़ा और अशोक के दायें हाथ को अपने हाथ में लेकर हस्त-रेखाएँ तीक्षण दृष्टि से देखने लगा। फिर आँखें मूँद लीं और थोड़ी

देर बाद आँखें खोलकर कहा "शुभ घड़ियाँ आसन्न हो गयीं।"

"किस के लिए" अशोक ने पूछा।

"अपनी स्वतंत्रता घोषित कर देने की शुभ घड़ियाँ" ज्योतिषी ने कहा। "किससे?" अशोक ने आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा।

"अवंती राज्य के राजा हो जाने की शुभ घड़ियाँ समीप आ गयीं। अवंती राज्य को स्वतंत्र घोषित कीजिये और सिंहासन पर आसीन हो जाइये।" ज्योतिषी ने कहा।

"यह तो मगध सम्राट मेरे पिता के विरुद्ध किया जानेवाला विद्रोह होगा।" अशोक ने कहा।

"हाँ, यह सच है। आप महाराज बनें, इसका यही एकमात्र मार्ग है। इसलिए इस मार्ग को अपनाने में कोई अपराध नहीं है। पाटलीपुत्र में महाराज का स्वास्थ्य बहुत ही चिंताजनक है। उन्होंने सुशेम को महाराज बनाने का निर्णय ले लिया।" ज्योतिषी ने कहा।

"मेरे पिताश्री का स्वास्थ्य चिंताजनक है?" अशोक ने आकुल हो पूछा।

"हाँ, फिर भी आपको इस स्थिति में पाटलीपुत्र जाना नहीं चाहिये। वहाँ आपकी जान का ख़तरा है। कम से कम एक वर्ष तक आपका उज्ञयिनी छोड़कर जाना अच्छा नहीं होगा।" ज्योतिषी ने कहा। इतने में बगल से कोई आवाज़ आयी तो अशोक ने मुड़कर देखा।

खिडकी से कोई झांक रहा है। क्रोध से अशोक की भृकुटियाँ तन गयीं। दूसरे ही क्षण वहाँ से आये अपने मित्र यश को देखते

हुए अशोक ने हँसकर कहा "आओ मित्र, आओ। आश्चर्य हो रहा था कि किसने खिड़की से झांककर देखने का साहस किया?"

ललितदत्त अनुमति लेकर वहाँ से निकलने लगा। ज्योतिषी भी जब जाने को उद्यत हुआ तब यश ने अपने म्यान पर हाथ रखते हुए कहा "एक पग भी आगे बढ़ा नहीं सकते हो।"

"युवराज की उपस्थिति में ही एक ज्योतिषी का यह अपमान। ऐसी मान मर्यादा?" ज्योतिषी ने नाराज़ी का नाटक करते हुए कहा।

"शत्रु के गुप्तचरों की मान-मर्यादा! हूँ" कहते हुए यश ने ज्योतिषी की कलई कसकर पकड़ ली और कहा "शिखरसेन, तुम मुझे नहीं जानते। पर मैं तुम्हें अच्छी तरह से जानता

हूँ। पाटलीपुत्र में सुशेम के भाइयों के साथ घूमते हुए मैंने तुम्हें देखा। तुम उनमें से एक हो, जो अशोक को मगध साम्राज्य के राजा बनने से रोकना चाहते हो। इन्हें सिंहासन पर आसीन देखना नहीं चाहते। मैं अच्छी तरह से जानता हूँ कि तुम सुशेम को सम्राट बनाने के षड्यंत्र में भागीदार हो। अशोक को गुमराह करने के लिए ही यहाँ आये हो। स्वतंत्र घोषित कराकर अशोक को बदनाम करने का कुचक्र रच रहे हो। प्राणों की भिक्षा चाहते हो तो साफ़-साफ़ बता दो कि यहाँ किस उद्देश्य से आये।'' गरजते हुए यश ने पूछा।

ज्योतिषी का चेहरा फीका पड गया। ललितदत्त भय से काँपने लगा। ''कौन है वहाँ'' चिल्लाकर यश ने ताली बजायी। तुरंत दो सिपाही वहाँ आकर खड़े हो गये।

''इन दोनों दुष्टों के हाथ-पाँव बाँधकर कारागार में बंद करने की अनुमति चाहता हूँ।'' यश ने अशोक से पूछा।

अशोक ने 'हाँ' के भाव में सिर हिलाया।

सिपाही उन दोनों को खींचकर बाहर ले गये।

''आपको पाटलीपुत्र न जाने देने के लिए ही इन दोनों ने यह षड्यंत्र रचा। आपके सौतेले भाइयों में से कोई भी आपकी मदद करने तैयार नहीं। सब आपसे ईर्ष्या करते हैं। महाराज की मृत्यु के पश्चात आपको सिंहासन पर आसीन न होने देने के लिए वे षड्यंत्र रच रहे हैं, योजनाएँ बना रहे हैं। महाराज का स्वास्थ्य क्षीण हो गया। वे किसी भी क्षण मृत्यु की गोद में लेट सकते हैं। उनके मरने के पहले वहाँ हमारा पहुँचना नितांत आवश्यक है। यह शिखरसेन तक्षशिला का नागरिक है। युवराज सुशेम का प्रतिनिधि बनकर पाटलीपुत्र की स्थिति-गतियों का परिशीलन करता है। अगर आपमें इस अवंती राज्य का राजा बनने की आशाएँ हों तो वे मूर्ख सपने देख रहे हैं कि आपकी दृष्टि मगध के सिंहासन से हट जायेगी और आप उस बात को भुला देंगे।'' यश ने आवेश-भरे स्वर में कहा।

उपरांत उसने अपने पाटलीपुत्र जाने, उसके माता-पिता से मिलने और उसके पिता के अनारोग्य के कारण उपस्थित समस्याओं का पूरा ब्योरा दिया। राजा की अस्वस्थता के कारण हुए राजनैतिक परिणामों का विशद विवरण अशोक को दिया।

''मित्र, तुरंत पाटलीपुत्र जाना चाहिए।

प्रधान मंत्री, सेनाध्यक्ष, राज- पुरोहित तीनों मगध व उसकी प्रजा का कल्याण चाहते हैं। वे आपको राजा बनाने की आकांक्षा रखते हैं। कुछ स्वार्थी उच्च राजकर्मचारी अपने स्वलाभ के लिए सुशेम को राजा बनाने के लिए उतावले हैं। जो पाटलीपुत्र पहले पहुँचेंगे, उन्हीं का राज्याभिषेक होने की अधिक संभावना है'' यश ने स्पष्ट किया।

अशोक कुछ नहीं बोला। गंभीर हो मौन बैठा रहा। उसके मन में तरह-तरह के विचार आने लगे।

थोड़ी देर बाद वहाँ आयी विशीदा ने यश को देखकर कहा ''प्रणाम भैय्या। मालूम ही नहीं हुआ कि तुम पाटलीपुत्र से लौट आये।'' धीरे से मुस्कुराते हुए उसने कहा।

''अभी, अभी लौट आया, बहन।'' यश ने कहा।

विदीशा ने अशोक की ओर मुड़कर कहा ''पाटलीपुत्र से दो दूत आये हैं। वे आपके दर्शन की प्रतीक्षा में हैं।''

अशोक मौन ही रहा। पर यश ने कहा ''जानकर बड़ी खुशी हुई। मैं जानता हूँ कि वे दूत किस काम पर यहाँ आये। युवराज अशोक को तुरंत पाटलीपुत्र जाना चाहिए। तक्षशिला में रहते हुए सुशेम को भी ऐसी ही ख़बर भेजी गयी होगी।''

विदीशा ने पूछा ''युवराज को तुरंत निकलना चाहिये?''

''हाँ, जाना ही पड़ेगा'' यश ने कहा।

''कारण?'' विदीशा ने पूछा।

''पिता जब मरण-शय्या पर हों, तब

पुत्र का वहाँ उपस्थित रहना नैतिक धर्म है। राजनैतिक दृष्टि से देखा जाए तो राज्याधिकार हस्तगत करने की सुशेम की योजना को विफल करने के लिए युवराज का राजधानी में रहना बहुत ही आवश्यक है।'' यश ने कहा।

''अग्रज को राज्याधिकार-प्राप्ति से दूर रखना क्या अन्याय नहीं है?'' विदीशा ने धीरे पूछा।

''एक भाई होने के नाते ऐसा करना अन्याय अवश्य है। किन्तु सुशेम राज्याधिकारी बना तो मगध साम्राज्य की जनता के साथ जान-बूझकर अन्याय करना है। यह तो उससे भी बड़ा अन्याय है। जनता की रक्षा करना क्या एक राजा का प्रथम कर्तव्य नहीं? परिपाटी के नाम पर जनता के साथ होते हुए

अन्याय चुपचाप देखते रहना अधर्म नहीं? उनका विरोध करने में स्वार्थ नहीं, परमार्थ है।'' यश ने कहा। विदीशा भाई की बातों पर चुप रह गयी।

यश ने अशोक से कहा ''मित्र, और विलंब मत कीजिये। क्षण भर भी यहाँ मत रुकिये। हमारी आधी सेना यहाँ रहेगी और शेष आधी सेना आपके साथ आयेगी।'' दृढ स्वर में यश ने कहा।

☆ ☆ ☆

आधी रात का समय है। एक विशाल कक्ष में मुलायम बिस्तर पर बैठकर, मदिरा पीते हुए ग्रीक सुँदरी का नृत्य देखने में तल्लीन है सुशेम। अकस्मात् वहाँ आयी दोनों नर्तकियों को देखकर उसने पूछा ''तुम! तुम दोनों यहाँ कैसे आयीं?''

''आपकी दी हुई राजमुद्रिका की सहायता से ही यहाँ आयी हैं युवराज।'' नर्तकियों ने खुलकर हँसते हुए कहा।

''जिस काम पर गयीं, उसमें कामयाब नहीं हुई, उल्टे मूर्खों की तरह पकड़ लीं गयीं। गुप्तचरों से मालूम हुआ कि तुम दोनों अशोक की पत्नी की दासियाँ भी हो गयीं। क्या यह सच नहीं?'' सुशेम ने पूछा।

''सौ फ़ी सदी सच है युवराज। परंतु आपका सौंपा काम पूरा करने के उद्देश्य से ही हम वहाँ रुक गयीं।'' नर्तकियों ने कहा।

''तुम्हारा मतलब?'' सुशेम ने पूछा।

नर्तकियों ने ग्रीक सुँदरी की ओर देखा।

सुशेम के इशारे पर ग्रीक सुँदरी वहाँ से चली गयी।

''अब बताओ, उस नीच को तुमने मौत के घाट उतार दिया? उसे परलोक भेज दिया?'' सुशेम ने पूछा।

''कहीं आप हमें घोषित पुरस्कार देने का वचन भूल तो नहीं गये? पहले यह विषय बताइये'' नर्तकियों ने पूछा।

''कैसे भूल जाऊँगा? मगध सिंहासन पर जैसे ही आसीन हो जाऊँगा, घोषित पुरस्कार से दुगना दूँगा। अब कहो कि उस दासी-पुत्र को तुमने कैसे मौत के घाट उतारा?'' सुशेम ने उत्साह-भरे स्वर में पूछा।

''हमने एक ही वार में उसे मृत्युलोक नहीं भेजा। एक प्रकार का विष आहार में मिलाया। उसके प्रभाव से अशोक पक्षाघात का शिकार हो गया। अब वह हमेशा बिस्तर पर पड़ा रहता है। उससे चला नहीं जाता'' नर्तकियों ने कहा।

"विष और अधिक मात्रा में मिला देतीं और उसे सदा के लिए सुला देतीं" सुशेम ने थोड़ी-सी निराशा-भरे स्वर में कहा।

"हम ऐसा करतीं तो पकड़ी जातीं। अब किसी को आप पर संदेह नहीं होगा। हम जिस काम पर गईं, सफल हुआ। जो उठकर बिस्तर पर भी बैठ नहीं सकता, भला वह राज सिंहासन पर कैसे आसीन होगा ?" नर्तकियों ने कहा।

"बहुत अच्छा काम किया तुम दोनों ने।" सुशेम की खुशी का ठिकाना न रहा। उसने गले से रत्न-हार निकाला और नर्तकियों को दिया।

इतने में किसी के दरवाज़ा खटखटाने की आवाज़ आयी। "आ सकते हो" सुशेम ने कहा।

अशोक का प्रधान अंगरक्षक अंदर आया और कहा "प्रभू, पाटलीपुत्र से दो दूत आये है। वे आपसे मिलना चाहते हैं।"

"उन्हें प्रवेश करो" सुशेम ने कहा।

दूत अंदर आये और सुशेम को प्रणाम किया। उन्होने दो पत्र उसे दिये। पहला पत्र प्रधानमंत्री व सेनाध्यक्ष का लिखा हुआ था। उस पत्र में लिखा हुआ था कि राजा का स्वास्थ्य बहुत ही चिंताजनक है, अतः तुरंत राजधानी पहुँचें। दूसरा पत्र उसकी माता का लिखा हुआ था। उस पत्र में उसकी माँ ने लिखा "तुमसे पहले ही अशोक के यहाँ पहुँचने की संभावना है। हो सकता है, तब उसे ही राज-गद्दी मिल जाए। इसलिए तुरंत निकलो और राजधानी पहुँचो। किसी भी हालत में देरी मत करना।" यही उस पत्र का सारांश था।

दोनों पत्रों को सुशेम ने पढ़ा। किन्तु विषय की गंभीरता की उसने लापरवाही की। उसने ज़ोर से हँसते हुए नर्तकियों से कहा "बेचारी मेरी मासूम माँ को मालूम नहीं कि तुमने अशोक की क्या दुर्गति कर दी। वह अनावश्यक ही घबरा रही हैं। मुझे जल्दी निकलने की कोई ज़रूरत नहीं है। मुझसे मिलने के लिए कल ग्रीक का एक व्यापारी आनेवाला है। अपनी वस्तुओं को तक्षशिला में बेचने के लिए मैंने उसे अनुमति दे दीं। प्रत्युपकार में वह मुझे एक क़ीमती मणि पुरस्कार के रूप में देनेवाला है।"

-सशेष

महाधन्व

चारों और अंधकार ही अंधकार है, हवा तेजी से चल रही है। पेड़ों की टहनियाँ तेज़ी से हिल-डुल रही हैं। ज़ोरों से वर्षा भी हो रही है। सियार और इतर जंतुओं की चिल्लाहटों से वातावरण और भयंकर हो रहा है। फिर भी धुन का पक्का विक्रमार्क पुनः पेड़ के पास आया। पेड़ से शव को उतारा और कंधे पर ड़ालकर यथावत् श्मशान की ओर बढ़ता गया। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा ''राजन्, तुम देश के राजा हो। तुम तो जानते ही हो कि इस सृष्टि में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं होगा, जिसे समस्त विषयों में संपूर्ण ज्ञान हो। इसी कारण राजा ऐसे बुद्धिमानों को अपने यहाँ रखते हैं, जो राजनैतिक विषयों में ही नहीं बल्कि सांसारिक विषयों में भी उन्हें सलाहें देते रहें। ये बुद्धिमान सलाहकार अपनी मेधा-शक्ति, अपने अनुभव व ग्रंथ-पठन से जो ज्ञान प्राप्त करते हैं, उनके

बैताल कथा

आधार पर कभी-कभी परस्पर-विरोधी सलाहें भी देते रहते हैं, जिसके कारण राजा को नष्ट पहुँचता है। वह अपने सही मार्ग से भटक जाता है। मेरी दृष्टि में राजा में विचक्षण-ज्ञान का होना आवश्यक है। उसका सूक्ष्म- ग्राही का होना आवश्यक है। उसे यह जानना आवश्यक है कि कौन-सी सलाह, कौन-सा अभिप्राय हेतुयुक्त है और कौन-सी नहीं। पूर्व महाधन्व नामक एक राजा ने बहुत कष्ट झेले, किन्तु बाद सुखपूर्वक जीवन बिताया। मंत्री ने इसका एक कारण बताया तो गुरु ने इसका दूसरा कारण बताया। राजा निर्णय नहीं करवाया कि कौन-सी सलाह सही है। किन्तु इतना तो वह जानता था कि उन दोनों में से किसी एक की सलाह ही सही हो सकती है। तुम्हारे इन असफल प्रयत्नों को देखते हुए मुझे लगता है कि तुम्हारे राजदरबार में भी कोई ऐसा व्यक्ति होगा, जो तुम्हें गुमराह कर रहा है और जिसके कारण इस श्मशान में तुम्हें इतने कष्ट झेलने पड़ रहे हैं। तुम्हें सावधान करने के उद्देश्य से महाधन्व की कहानी सुनाने जा रहा हूँ। अपनी थकावट दूर करते हुए उसकी कहानी ध्यान से सुनो।'' फिर बेताल ने यों कहा।

महाधन्व निषध राज्य का राजा था। वह चाहता था कि अपने नाम के अनुरूप ही अपने पास एक अद्भुत धनुष हो। उसने मंत्री को बुलाकर उससे कहा ''महामंत्री, महाधन्व वह होता है, जिसके पास अद्भुत धनुष हो। मेरे पास ऐसा धनुष होना चाहिये, जो और किसी राजा के पास न हो। तुरंत निपुणों को बुलवाइये और भारी धनुष का निर्माण कराइये। अर्जुन के गांडीव की तरह, श्रीराम के कोदंड की तरह मेरे धनुष की ख्याति भी चहु दिशाओं में व्याप्त हो।''

राजा चाहे और न हो, भला ऐसे कैसे हो सकता है। मंत्री का बुलावा पाकर कितने ही धनुष-निर्माण के निपुण कलाकार राजधानी नगर पहुँचे। अटिनी, कर्णिका, स्कंध, शंख, पल्लव, लस्तक नामक छे भागों से शास्त्रानुसार एक महाधनुष का निर्माण हुआ। उसे बड़े ही सुंदर ढंग से सजाया गया।

उस धनुष को देखने के बाद मुक्तकंठ से सबने उसकी प्रशंसा की। कहा कि अर्जुन के गांडीव की तरह यह भी भारी है और ऐसा अपूर्व धनुष किसी और राजा के पास है ही नहीं। शुभ मुहूर्त पर राजा ने धनुष में प्रत्यंचा चढ़ायी और निशाना बांधा। अपने लक्ष्य

बेधने में सफल राजा की सबने भरपूर प्रशंसा की और घोषित किया कि महाराज ने अपना नाम सार्थक किया।

एक दिन महाधन्व धनुष धारण करके आखेट करने अरण्य गया। आखेट करते समय धनुष एक महावृक्ष के तने से जा लगा, जिसके कारण उसमें दरार पड़ गयी। लौटने के बाद राजा ने मरम्मत करवायी, जिससे दरार दिखायी नहीं दे रही थी।

राजा ने दूसरे दिन धनुर्विद्या सिखानेवाले अपने गुरु से यह बात बतायी। गुरु ने तब उस धनुष की लंबाई एक सींक से नापी। उसके बाद एक गोल आकार का चक्र खींचा, उसमें पद्म खींचा और उस सींक को समान टुकड़ों में काटा। फिर उन्हें पद्म की पंखुडियों में डाला, तो परिणाम जानकर बहुत ही घबरा गया। धनुष-शास्त्र के अनुसार ऐसा होना नहीं चाहिये। वह जान गया कि इस धनुष से राजा का अहित होनेवाला है, राजा विपत्तियों में फँसनेवाला है।

गुरु ने राजा से कहा "ध्यान से देखो। पद्म की इन पंखुडियों में दो कोण हैं। इसे पद्मचक्र कहते हैं। सींक के ये टुकड़े दोनों कोणों की पंखुडियों के समान हों तो मतलब हुआ कि धनुष में कोई दोष नहीं है। धनुष-शास्त्र इस पद्मचक्र के आधार पर यह सत्य बता रहा है। इस शास्त्र-ज्ञान में मेरे गुरु अधर्वणी से कोई बढ़कर नहीं है। सींक का अंतिम भाग प्रथम कोण तक ही आता है। इसका अर्थ यह हुआ कि इस धनुष में औष्मिक दोष है। इसे धारण करोगे तो तुम्हें कष्टों का सामना करना पड़ेगा।"

गुरु की कही बातें राजा को सही लगीं, किन्तु महाधन्व धनुष धारण करके घूमता ही रहा, क्योंकि धनुष से उसे विशेष लगाव था। वह अपने लगाव पर काबू पा न सका। थोड़े

शांत हो जायेगा तब आप हमारी सहायता लेकर युद्ध कीजिये और अपने राज्य को पुन: प्राप्त कर लीजिये ।''

वनजनों की बस्ती में सबके सब धनुष लिये घूम रहे थे । स्त्रीयाँ भी धनुष-बाण लिये घूम रही थीं । राजा इस दृश्य को देखकर बहुत खुश हुआ । उसने सरदार से कहा ''तुम लोगों के धनुष बहुत ही छोटे हैं । देखो, मेरा धनुष कितना भारी है । इसे ढोना आपके लिए मुश्किल का काम है ।'' उसे अपने धनुष से इतना लगाव था कि वह यह भी भूल गया कि दोष-युक्त उस धनुष के कारण ही युद्ध में उसकी हार हुई ।

तब सरदार ने विनयपूर्वक कहा ''महाराज, आप तो जानते ही हैं कि हर बात के पीछे शास्त्र की कोई न कोई पद्धति होती है । हमारी
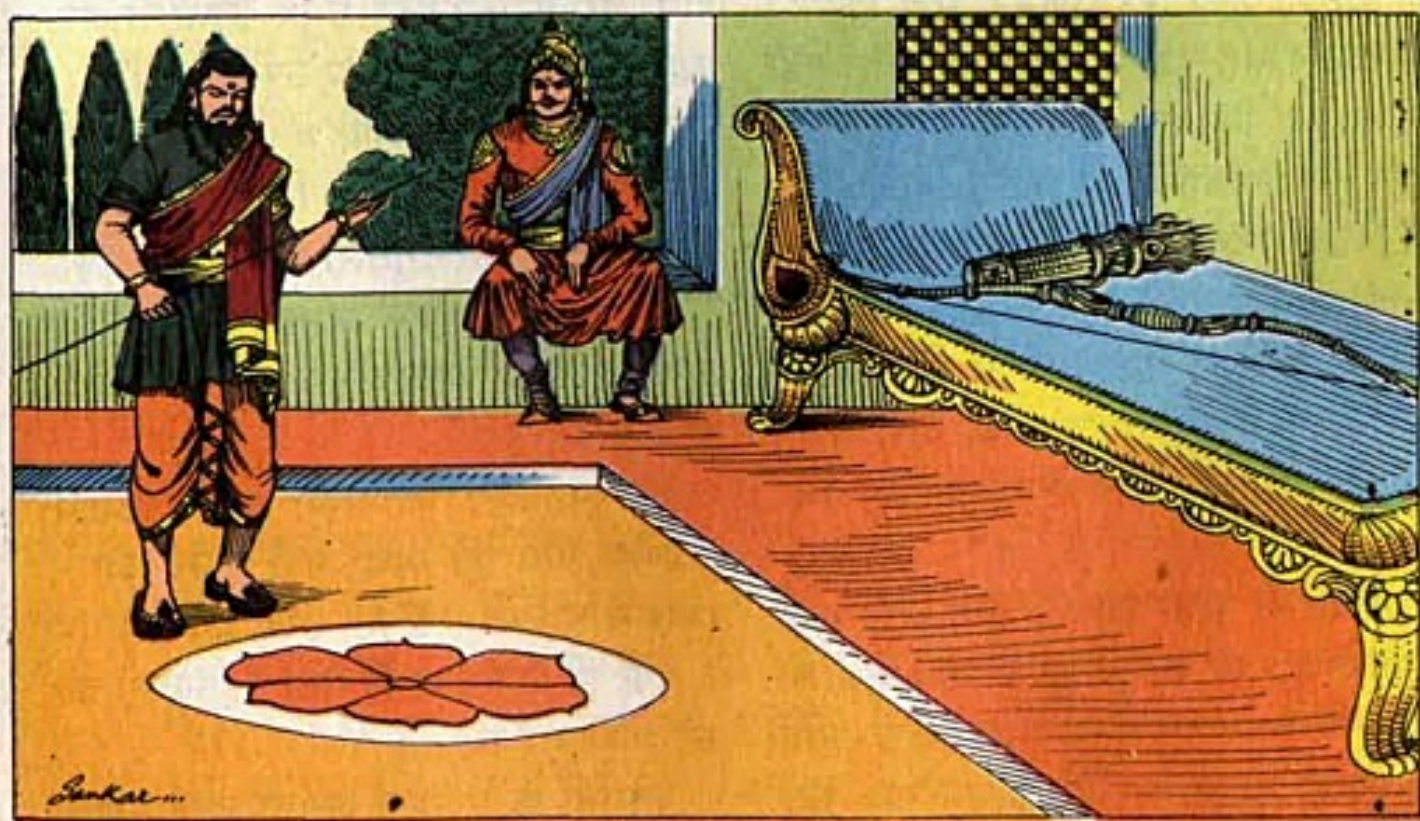
ही दिनों में एक शत्रु राजा ने उसके राज्य पर आक्रमण किया । औष्मिक दोष के उस धनुष को धारण करके ही राजा ने युद्ध किया । फलस्वरूप वह युद्ध में हार गया । वह नहीं चाहता था कि शत्रु के हाथों में कैदी बन जाऊँ और अपमानित हो जाऊँ, इसलिए घोड़े पर चढ़कर जंगल की तरफ़ भाग गया ।

जंगल में बहुत दूर गया और थककर एक वृक्ष के नीचे बैठ गया । जंगल में रहनेवाले वनजनों ने जब दुखी राजा को देखा तो वे दौड़े-दौड़े गये और अपने सरदार को यह ख़बर सुनायी ।

सरदार ने राजा को पहचाना और कहा ''महाराज, हमें मालूम हुआ कि शत्रुओं ने राज्य पर हमला किया था । आप कुछ समय तक हमारे ही साथ रहिये । जब सब कुछ

जीवन-पद्धति में धनुष व बाण का हल्का होना ज़रूरी है । रथ में बैठकर, अथवा घोड़े या हाथी पर चढ़कर जिन धनुष-बाणों से आप युद्ध करते हैं, वे हमारे लिए उपयोगी नहीं हैं । जिस धनुष का आप ज़िक्र कर रहे हैं, उसका उपयोग हम आत्म-रक्षा के लिए या आखेट के लिए करते हैं । हम धनुर्धारी कहलाने के लायक नहीं हैं । हम भी अपने शास्त्र के अनुसार ही धनुष बनाते हैं । अगर उसमें लोप या दोष हों तो फेंक देते हैं ।''

तब महाधन्व को अपने गुरु के बताये औष्मिक दोष की याद आयी । उस दोष-प्रभाव ने अब भी उसे नहीं छोड़ा । एक सप्ताह के अंदर ही शत्रुराजा की सेना ने वनजनों की बस्ती को घेर लिया ।

वनजनों के पराक्रम अथवा उनके युद्ध-

कौशल पर राजा को रत्ती भर भी विश्वास नहीं था। इसलिए वह अपने दुर्भाग्य पर अपने आप को कोसता रहा और चुपचाप वहाँ से भाग निकला। जंगल पार करने के बाद एक उजड़ा मंदिर दिखायी पड़ा तो वह उसी में छिप गया। थोड़ी देर बाद महाधन्व को बड़ी भूख लगी। भूख उससे सही नहीं गयी, इसलिए देवालय के मंडप पर विचरते हुए कबूतरों को पकड़ने के लिए अपना दुपट्टा बिछा दिया। तब एक विचित्र घटना घटी। निषिध देश के पूर्व राजा नल मदाराज के जीवन में घटी घटना की तरह कबूतर उस दुपट्टे को उड़ा ले गये। महाधन्व में उक्रोश भर आया। उसे लगा कि इस धनुष के दोष के ही कारण मुझे इतनी तक़लीफ़ें झेलनी पड़ रही हैं। तुरंत उसने एक बाण निकाला और एक बड़े पत्थर को अपना निशाना बनाया। फिर धनुष के टुकड़े-टुकड़े किये।

फिर वह उस पथ्थर के पास गया। देखा कि पथ्थर टुकडों में टूट गया और वहाँ के भूगर्भ में एक निधि दिखायी पड़ी। वहाँ चार पेटियाँ थीं, जिनमें रत्न, वज्र, सोना तथा अशर्फ़ियाँ थीं। राजा आश्चर्य में आकर उन्हीं को देखता रहा।

इतने में वनजनों का सरदार राजा को ढूँढ़ता हुआ वहाँ आया और कहा "महाराज, शत्रुराजा की दृष्टि में हमारा धैर्य साहस व हमारा युद्ध-कौशल नहीं के बराबर था। जंगल के पथ्थरों के ढेरों पर और पेड़ों के बीच में अश्व-सैन्य कुछ नहीं कर सकता। अब रही भू-सेना की बात। हम जंगल में पैदा हुए और बड़े हुए। एक-एक वन-जन

दस-दस सिपाहियों के समान है। हमने शत्रुराजा को हराया और बंदी बना लिया।"

महाधन्व ने सरदार की प्रशंसा की। वनजनों की सहायता से धन-राशि लेकर वह सीधे राजधानी पहुँचा।

उस समय राजभवन के सामने मंत्री व राजगुरु खड़े थे। धन-राशि को देखकर मंत्री ने कहा "प्रभू, धनयज्ञ नामक आपके एक पूर्वज ने बहुत-से यज्ञ किये। जिस उजड़े मंदिर में आप रुके थे, उन्होंने बहुत पहले वहाँ एक यज्ञ भी किया। ग़रीबों में बाँटने के बाद जो धन-राशि शेष रह गयी, उन्होंने ही वहाँ छिपायी और एक बड़े पथ्थर से उसे ढ़क दिया। कहते हैं, उन्होंने बाद वानप्रस्थ स्वीकार किया। बाद महाराज के वारिसों ने उस धन-राशि को पाने की बहुत कोशिश

की, किन्तु वे सफल नहीं हो पाये। धीरे-धीरे सब इस बात को भूल गये। परदादा, दादाओं के ज़माने से मंत्री के वारिस हमारे मस्तिष्क में यह रहस्य निक्षिप्त है। मैं ढोल पीटकर कह सकता हूँ यह वही निधि है। आप सचमुच महाधन्य हैं। आपके धनुष के कारण ही निधि का पता चला।''

राजगुरु ने मंत्री की बातों पर हँसते हुए कहा ''महाधन्व ने जैसे ही धनुष को तोड़ दिया, औष्मिक दोष दूर हो गया और राज्य के साथ-साथ संपदा भी मिल गयी।''

बेताल ने कहानी सुनाने के बाद कहा ''राजन्, महाधन्व के मंत्री व गुरु दोनों बड़े मेधावी लग रहे हैं। मंत्री के कहे अनुसार महाधन्व के धनुष के कारण ही उनके पूर्वजों का छिपाया धन उसे दिखायी पड़ा। परंतु गुरु का कथन था कि औष्मिक दोष के दूर हो जाने के बाद ही, धनुष को तोड़ने के बाद ही, राजा को वह निधि मिली। मेरी समझ में नहीं आता कि इन दोनों में किसका अभिप्राय सही है। मेरे संदेह को दूर करो। समाधान जानकर भी तुम चुप रहोगे तो तुम्हारे सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जाएँगे।''

विक्रमार्क ने कहा ''काल व परिस्थितियों के प्रभाव के कारण ही मनुष्य को हानि और लाभ पहुँचते हैं; उनकी बुराई और भलाई होती है। लौकिक विषयों के प्रति जिसकी परिशीलन-दृष्टि गहरी होती है, वही इस सत्य को जान पाता है। मंत्री लौकिक है, व्यावहारिक है, राजनीतिज्ञ है, किन्तु गुरु की बात अलग है। उसने अपने गुरु अधर्वणी से शिक्षा पायी। उसका विश्वास है कि उससे अध्ययन किये गये शास्त्र स्थल-काल के परे हैं, वे नित्य सत्य हैं। महाधन्व ने जैसे ही बाण फेंका और पथ्थर को फोड़ा, भूगर्भ में निक्षिप्त धन-राशि प्रकट हुई। उसके बाद ही राजा ने धनुष तोड़ दिया। इसका यह अर्थ हुआ कि गुरु के कहे औष्मिक दोष से भरे धनुष ने ही महाधन्व को उसके पूर्वजों से सुरक्षित धन-राशि दिलवायी। इस सूक्ष्म सत्य को मंत्री ने समझ लिया। शास्त्रज्ञ गुरु इस सत्य को समझने में विफल हुआ। अतः मंत्री का अभिप्राय ही सही है।''

राजा के मौन-भंग में सफल बेताल शव सहित अदृश्य हो गया और फिर से पेड़ पर जा बैठा। **आधार - चतुरसेन की रचना**

भाई-भाई

एक गाँव में दशरथ नामक एक व्यक्ति था। उसके दो बेटे थे। दोनों उत्तम कोटि के मनुष्य थे। बड़े का नाम राम और छोटे का लक्ष्मण।

सचमुच दोनों राम-लक्ष्मण ही थे। एक दूसरे को बहुत चाहते थे। दोनों में परस्पर अपार प्रेम था। माता-पिता के प्रति भक्ति-भाव रखते थे। दोनों बड़े हुए और दोनों ने शादी कर ली। उनकी पत्नियाँ परिवार बसाने ससुराल आयीं।

कुछ सालों बाद उनके माता-पिता स्वर्गवासी हो गये। फिर भी दोनों भाई मिल-जुलकर ही रहने लगे। अपनी खेती-बाड़ी स्वयं संभाल रहे थे। छोटा भाई खाने जाता तो बड़ा भाई खेत की रखवाली करता था।

समय बीतता गया। राम की कोई संतान नहीं थी, परंतु छोटे भाई लक्ष्मण के पाँच बच्चे हुए।

इस कारण दोनों की पत्नियों में घरेलू कामों को लेकर झगड़े होने लगे। वाद-विवाद होते रहे। अक्सर वे आपस में झगड़ने लगे।

दोनों भाई नहीं चाहते थे कि उनकी दोनों पत्नियाँ आपस में यों झगड़ती रहें। उन्होंने इन झगड़ों को रोकने के लिए भरसक प्रयत्न किये, परंतु कोई फ़ायदा नहीं हुआ। अब इन झगड़ों को मिटाने के लिए एक ही मार्ग खुला था। वह था - बंटवारा। दोनों भाइयों ने अपने-अपने हिस्से का खेत बांट लिया। फिर भी दोनों भाइयों के पारस्परिक प्रेम में कोई ढ़िलाई नहीं आयी। खेत के पास दोनों यथावत् आपस में मिलते रहे, बातें करते रहे।

एक साल खेतों में अच्छी फ़सल हुई। दोनों भाइयों ने फ़सल कटवायी, धान दंवाया और अनाज के ढ़ेर लगवाये। अब धान को घर पहुँचाने का काम मात्र बाक़ी था।

उस रात को दोनों अपने-अपने खेतों में

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

ही रह गये। भोजन के समय राम ने लक्ष्मण से कहा "भाई, मैं घर जाकर खाना खाकर लौटूँगा। तब तक मेरे अनाज पर भी निगरानी रखना। मेरे लौटने के बाद तुम खाने जाना।"

लक्ष्मण ने 'हाँ' कहकर अपने भाई को भेज दिया। भाई के चले जाने के बाद लक्ष्मण सोचने लगा "मेरे तीन बेटे हैं और दो बेटियाँ। बड़ा बेटा दो-तीन सालों में काम करने के लायक हो जायेगा। तब मेरा काम आसान हो जायेगा। जिम्मेदारी घट जायेगी। किन्तु मेरे बेचारे भाई की कोई संतान नहीं है। उसकी उम्र भी बढ़ती जा रही है। बुढ़ापे में सुखी रहना हो तो उसे अब खूब कमाना होगा। नहीं तो तरह-तरह के कष्ट उठाने पड़ेंगे। उस उम्र में बेचारे की हालत बड़ी ही दयनीय हो जायेगी। अगर मैं उसकी सहायता करना चाहूँ तो वह इनकार कर देगा। वह शायद मान भी जाए, पर उसकी पत्नी किसी भी हालत में नहीं मानेगी।" यों सोचकर लक्ष्मण ने एक बड़ी टोकरी ली और दस टोकरियों का अपना अनाज उसके ढ़ेर में ड़ाल दिया। फिर अपने खाट पर निश्चिंत बैठ गया, मानों कुछ भी नहीं हुआ।

इतने में राम खाना खाके वापस आ गया। उसने लक्ष्मण को खाने घर भेजा। लक्ष्मण के चले जाने के बाद राम सोच में पड़ गया। वह सोचने लगा "इस साल अच्छी फ़सल हुई। पर लक्ष्मण को इससे क्या लाभ होगा। उसका परिवार बड़ा है, बच्चों को पढ़ाना है, कपड़े खरीदने हैं। बहुत-सा खर्चा है। पर मेरी बात अलग है। मैं हूँ और मेरी पत्नी। मेरी जिम्मेदारियाँ सीमित हैं। मेरी आवश्यकताएँ नहीं के बराबर हैं। मेरे गुज़र जाने के बाद मेरी संतान तो है नहीं, जिनके लिए मैं थोड़ा-बहुत छोड़ जाऊँ। इस साल लक्ष्मण की सहायता करनी हो तो भगवान ने इसके लिए अच्छा मौक़ा भी दिया। अपना अनाज दूँ तो वह मानेगा ही नहीं। अगर वह लेने मान भी जाए तो भी उसकी पत्नी मानेगी ही नहीं, किसी भी हालत में अनाज लेने नहीं देगी। इसलिए राम ने इधर-उधर झांका और उसी बड़ी टोकरी में अनाज भर दिया, जिस टोकरी का उपयोग लक्ष्मण ने किया था। दस टोकरियों का अनाज अपने ढ़ेर से लिया और भाई के अनाज में मिला दिया। फिर लौटकर बैठ गया, मानों कुछ हुआ ही नहीं।

समुद्रतट की यात्रा 24

कवियों और द्रष्टाओं की भूमि

वर्णन : मीरा नायर ◆ चित्र : गौतम सेन

मंदिरों की भूमि उड़ीसा से रवाना हो कर हम पहुंचते हैं कवियों और द्रष्टाओं की भूमि बंगाल में.

उड़ीसा के आगे का समुद्रतट जो बंगाल के मेदिनीपुर (मिदनापुर) जिले में पड़ता है *कांथी* कहलाता है. मेदिनीपुर पश्चिम बंगाल का दूसरे नंबर का सबसे विशाल जिला है. इसकी जमीन बड़ी उपजाऊ है. पूरा जिला धान के खेतों, केले आम कटहल और नारियल के बगीचों से आच्छादित है. यहां की चटाइयां बहुत मशहूर हैं, जो *होग्ला* नाम की घास से बनायी जाती हैं.

कांथी तट पर सबसे मशहूर पर्यटन-स्थल है – *दीघा.* इसका बालूतट 8 कि.मी. लंबा है. इसके एक ओर रेत के टीले हैं, दूसरी ओर लहराता हुआ समुद्र. इसे अंग्रेज लोग 'बीयरकूल' कहा करते थे. बंगाल के प्रथम गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स ने इसे 'पूर्व का ब्राइटन' कहा था.

तट से डेढ़ मील भीतर तक समुद्र में पानी छिछला और शांत है. भाटे के समय इस बालूतट पर कारें आराम से चलायी जा सकती हैं. उनके पहिये रेत में नहीं धंसते. असल में यहां रेत की परत इतनी ठस और मजबूत है कि हलके विमान उस पर आसानी से उतर सकते हैं.

दीघा का बालूतट

सुतानुटी का बैठकखाना

जहां कांथी तट समाप्त होता है, वहां गंगा की धारा हुगली समुद्र से मिलती है. इस चौड़ी गहरी धारा में जहाजों का आवागमन प्राचीन काल से होता आया है.

समुद्र से कुछ भीतर की ओर हुगली के तट पर *तमलुक* है, जो प्राचीन काल में *ताम्रलिप्ति* कहलाता था और ई.पू. छठी-पांचवीं सदी से पूर्वी भारत का एक महत्वपूर्ण बंदरगाह था. ऐसा कहा जाता है कि गया के पवित्र बोधिवृक्ष की शाखा जब समुद्री मार्ग से श्रीलंका भेजी गयी, तब सम्राट अशोक उसे विदा देने स्वयं यहां पधारे थे.

सुतानुटी हुगली के किनारे एक उजड़ा हुआ गांव था. जब हुगली में रेत जमा हो जाने से जहाजों का उसमें ज्यादा भीतर जा पाना मुश्किल हो गया, तो व्यापारियों ने सुतानुटी में बाजार लगाना शुरू किया. वे एक विशाल पीपल के नीचे बैठा करते थे. वह जगह 'बैठकखाना' कहलाने लगी. ईस्ट इंडिया कंपनी का एजेंट जोब चार्नाक अगस्त 1690 के एक रविवार को बैठकखाना पहुंचा. कहते हैं, यह जगह उसे इतनी पसंद आयी कि उसने कंपनी की कोठी के लिए इसे चुन लिया. बाद में वारेन हेस्टिंग्स के समय पीपल का वह वृक्ष काट डाला गया.

चार्नाक ने सम्राट औरंगजेब से तीन गांव *सुतानुटी, गोविंदपुर* और *कालीकाता* पट्टे पर प्राप्त किये और वहां *कलकत्ता* शहर की नींव डाली.

चार्नाक कलकत्ता का प्रथम गवर्नर नियुक्त हुआ और अपनी हिंदुस्तानी बीवी के साथ यहां रहता था. उसकी मृत्यु कलकत्ता में ही हुई. उसकी कब्र सेंट जॉन के गिरजे में देखी जा सकती है.

अंग्रेजों ने कालीकाता को अपने ढंग से बोल कर 'कैलकटा' बना दिया, जिस पर से *कलकत्ता* शब्द बना. कई बंगालियों का ऐसा खयाल है कि इस शहर का यह नाम *कल काट* शब्द पर से पड़ा. 'कल काट' ईंटों के भट्ठे को कहते हैं, जो कि यहां पर बड़ी संख्या में थे.

देश के 11 बड़े बंदरगाहों में से सिर्फ कलकत्ता नदी-किनारे का बंदरगाह है. वह समुद्र से 232 कि.मी. दूर है. नौकाचालन की बहुत-सी समस्याएं इस बंदरगाह से जुड़ी हुई हैं. इसमें से निरंतर रेत हटानी पड़ती है. समुद्र से बंदरगाह पहुंचने के लिए जहाजों का मार्गदर्शन करना पड़ता है. नदी में पानी का स्तर रोज चढ़ता-उतरता रहता है.

सेंट जॉन गिरजे में जोब चार्नाक का स्मारक
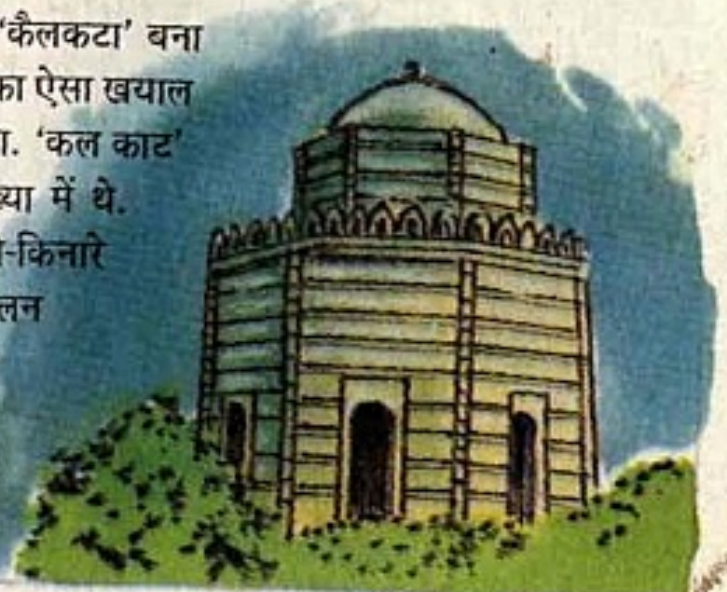
इसलिए उसका निरंतर सर्वेक्षण करते रहना और कहां वह गहरी या उथली है, इसे दर्ज करते रहना पड़ता है.

हुगली पर कलकत्ता से नीचे *हल्दिया* बंदरगाह की स्थापना 1977 में की गयी, ताकि कलकत्ता की नौकाचालन की समस्याओं से बचा जा सके. हल्दिया बंदरगाह का 'लॉक' प्रवेशद्वार दुनिया के इस तरह के सबसे बड़े प्रवेशद्वारों में से है.
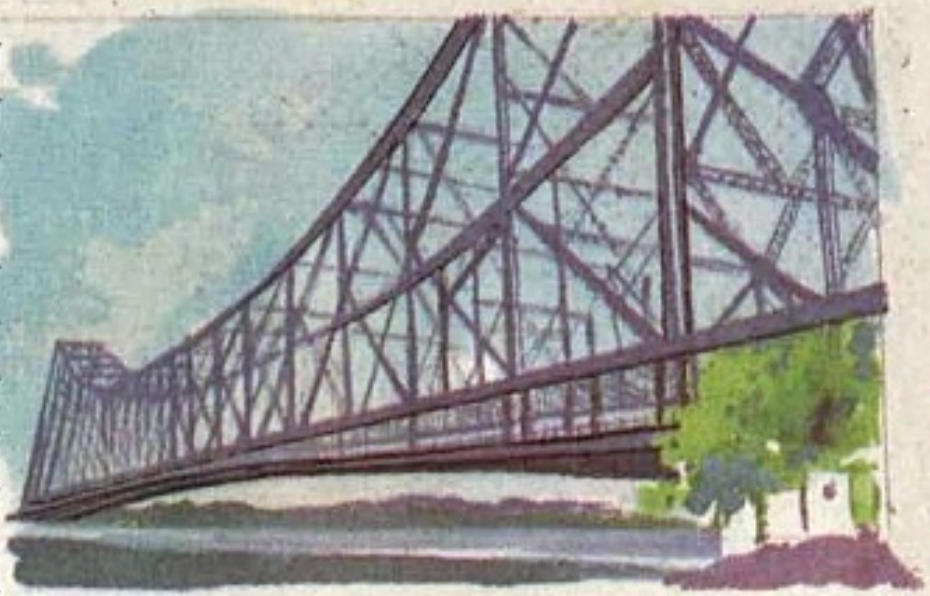
रवींद्र सेतु

सन 1943 तक हावड़ा (शुद्ध रूप 'हाउड़ा') कलकत्ता से एक तैरते पुल के जरिये जुड़ा हुआ था, जिसे 'हावड़ा ब्रिज' कहते थे. उस पर हरदम भारी भीड़ लगी रहती थी. उसकी जगह नया कैंटीलीवर पुल बनाया गया, जो भारत में इस तरह का सबसे विशाल पुल है और 'रवीन्द्रसेतु' कहलाता है. 457 मी. लंबे इस पुल पर गाड़ियों के लिए 8 लेनें तथा दो फुटपाथ हैं. यह दुनिया के सबसे व्यस्त पुलों में से है.

हावड़ा में शिबपुर का बोटैनिकल गार्डन (वनस्पति-उद्यान) 1786 में कायम किया गया. इसका विशाल बरगद मशहूर है. वह 24.4 मीटर ऊंचा है और उसका घेरा 366 मीटर है. उसका मूल तना तो फफूंद से सड़ कर नष्ट हो गया, मगर एक हजार से ज्यादा जटाशाखाएं उसे थामे हुए हैं. पेड़ खूब स्वस्थ है और उसकी नयी-नयी शाखाएं निकलती रहती हैं.

इस वनस्पति-उद्यान में 12,000 विदेशी पेड़-पौधे हैं. यहां अमेजन नदी के विशाल कमल, मोलुक्का द्वीप के जायफल के वृक्ष तथा पशिचम अफ्रीका के तेलताड़ देखे जा सकते हैं. इन ताड़ों में से एक 'कैरिफा इलाटा' किस्म का है, जिसमें चालीस साल में सिर्फ एक बार फूल लगता है, सो भी सिर्फ एक फूल !

वनस्पति-उद्यान का विशाल बरगद

इस बगीचे में केंद्रीय राष्ट्रीय वनस्पति-गृह है, जिसमें 25 लाख सुखाये हुए पौधों के नमूने, और वनस्पतिशास्त्र, कृषिविज्ञान, कीटविज्ञान और भूविज्ञान की मूल्यवान पुस्तकें, शोध-पत्रिकाएं व पांडुलिपियां रखी हुई हैं.

हावड़ा के उत्तर में बेलूर (शुद्ध रूप 'बेलुड़') में रामकृष्ण मिशन का मुख्यालय है. इसकी स्थापना स्वामी
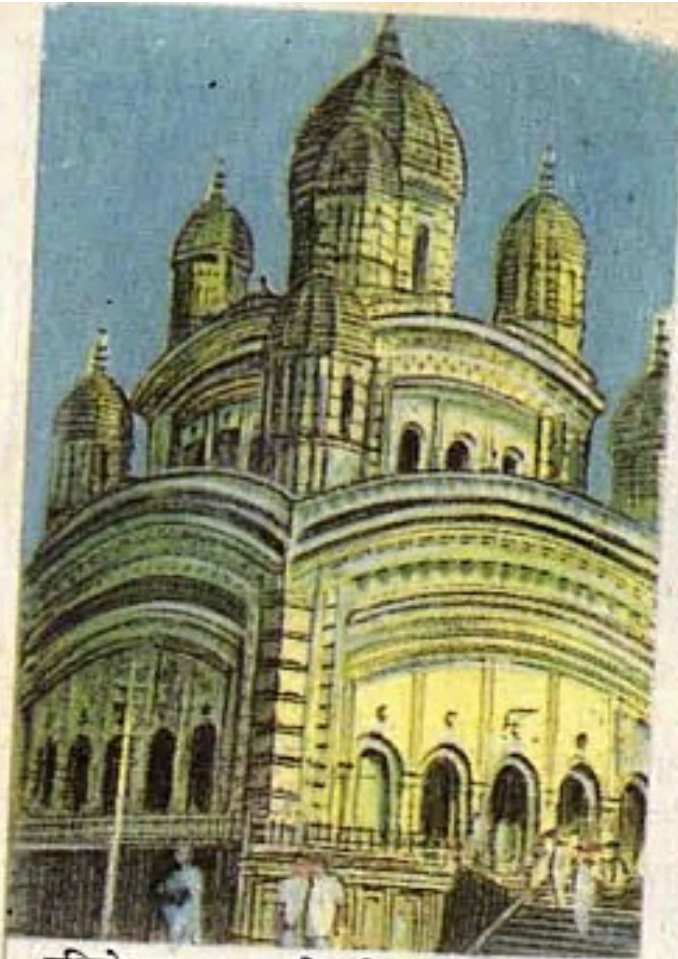
दक्षिणेश्वर का काली मंदिर

विवेकानंद ने 1899 में की थी. विवेकानंद 19वीं सदी के महान संत-साधक श्री रामकृष्ण परमहंस के शिष्य थे. रामकृष्ण ने अपनी साधना द्वारा यह अनुभव किया कि समस्त धर्मों का सार एक ही है और इस सत्य का उपदेश किया.

बेलूर मठ में एक मंदिर है जिसमें हिंदू मंदिर, गिरजाघर और मस्जिद तीनों के लक्षणों का समावेश किया गया है.

हुगली नदी के उस पार भव्य दक्षिणेश्वर मंदिर है, जिसका निर्माण रानी रासमणि ने 1847 में कराया था. इस मंदिर में पुजारी के रूप में काम करते हुए ही रामकृष्ण ने आध्यात्मिक साधना की थी और सब धर्मों की एकता का अनुभव पाया था.

दक्षिणेश्वर के दक्षिण में कुम्हार टोली है. यहां के कुम्हार मिट्टी की सुंदर दुर्गा-मूर्तियां बनाने के लिए मशहूर हैं. ज्यादातर मूर्तियां आदमकद होती हैं और चटक रंगों में रंगी हुई. उन्हें पकाया नहीं जाता, क्योंकि नवरात्र के अंतिम दिन पानी में उनका विसर्जन करना होता है.

दुर्गापूजा बंगालियों का सबसे बड़ा त्योहार है और नवरात्र या दशहरे के दिनों (सितंबर-अक्तूबर) में होती है. कथा है कि हिमालय की पुत्री दुर्गा या पार्वती शिवजी से प्रेम करने लगीं. उनकी मां मेना यह सोच कर दुखी हो उठीं कि उनकी बेटी शिव जैसे फक्कड़ की पत्नी बनेगी तो जीवन में कोई सुख नहीं पा सकेगी. मगर पार्वती थीं कि अड़ गयीं – *बरौं संभु नत रहौं कुमारी.* यही नहीं, उन्होंने शिवजी को रिझाने के लिए कठोर तपस्या शुरू कर दी.

अंत में शिवजी पार्वती के प्रेम पर रीझे और उनसे विवाह करके उन्हें कैलास ले गये. हिमालय और मेना बेटी से बिछुड़ कर उदास रहते थे. जब भी पार्वती उनसे मिलने घर आतीं वे बड़ा उत्सव मनाते थे. बंगाली लोग दुर्गापूजा को देवी के अपने पीहर लौटने का उत्सव मानते हैं.

दुर्गा की मिट्टी की मूर्ति

जल में गिरा छींटा

सीतापुर के आस्थान में जोगिंदर नामक एक कवि था। सभी कहते थे कि वाक्-चातुर्य में उसकी बराबरी का कोई है ही नहीं। दरबार का अधिकारी चपल हास्य से बिल्कुल अपरिचित था। जोगिंदर की हर बात में उसे व्यंग्य नज़र आता था। उसे लगता कि जान-बूझकर उसकी हँसी उड़ायी जा रही है। चपल जानता था कि कवि के साथ अन्याय करने पर उसकी बदनामी होगी। इसलिए जोगिंदर को सताने के लिए वह अन्य मार्ग अपनाता था। ज़मींदार ने क़वि को दस एकड़ की उपजाऊ ज़मीन दी थी। कम से कम सौ बोरों का अनाज उस खेत से उसे हर साल मिलता था। उस साल किसान ने झूठ कह दिया कि फ़सल अच्छी नहीं हुई और उसे सिर्फ़ दस बोरों का ही अनाज दिया। जोगिंदर को मालूम नहीं था कि चपल ने ही किसान से ऐसा कहलवाया, इसलिए किसान ने जो दिया, ले लिया।

आस्थान में जब कवि अच्छी कविता सुनाता अथवा अन्य आस्थानों से जब पंडित व कवि आते तब आस्थान के कवि को उसके पांडित्य-प्रदर्शन पर सोने की अशर्फ़ियाँ पुरस्कार के रूप में दी जाती थीं। यह चला आता हुआ संप्रदाय था। चपल ने इस संप्रदाय को तोड़ा और उसकी जगह पर जोगिंदर को खिताब देने लगा; शाल ओढ़ने लगा या सुँदर शिल्प देने लगा।

इतना सब कुछ करने के बाद भी चपल कहता रहता "साधारण व्यक्तियों को ऐसी वस्तुएँ दी जाएँ तो उनका मूल्य वे आँक नहीं सकते। अपनी ज़रूरतें पूरी करने के लिए वे उन्हें बेच डालेंगे। मुझे मालूम है कि जोगिंदर इन वस्तुओं को बड़ी ही सावधानी से सुरक्षित रखेगा और इन्हें दूसरों को दिखाते हुए गर्व महसूस करेगा।"

राम कश्यप

समय यों गुज़रता गया। जोगिंदर पैसों की तंगी महसूस करने लगा। ऐसी स्थिति में ज्योतिपुर के आस्थान से विदुर नामक पंडित आया। उसने अपने पांडित्य से चपल को संतुष्ट किया। चपल ने पंडित की भरपूर प्रशंसा की और उससे कहा कि जो चाहो, माँगो।''

''महोदय, आपके आस्थान-कवि जोगिंदर असमान प्रतिभावान कवि हैं। हमारे संस्थानाधीश श्री जगपति की तीव्र इच्छा है कि वे एक बार ही सही, हमारे आस्थान में आयें और अपनी मधुर कविता सुनाएँ। मेरी विनती है कि आप जोगिंदर को मेरे साथ भेजें।'' चपल उसकी विनती सुनकर आश्चर्य में डूब गया। उसने कहा ''पुरस्कार के रूप में हीरे-जवाहरात, धन, सोना आदि मांगे जाते हैं। तुम्हारी यह इच्छा बड़ी ही विचित्र लग रही है। जोगिंदर को तुम्हारे साथ भेजने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। उसे अपने साथ अवश्य ले जाओ। तुम्हें अलावा इसके, कुछ और माँगना हो तो माँगो।''

विदुर ने विनयपूर्वक प्रणाम करके कहा ''हमारे प्रभु की दया के कारण मुझे किसी चीज़ की कमी नहीं है। किसी और आस्थान से धन की आशा रखना अपने आस्थान का अनादर करना है; इसलिए आप कृपया धन लेने पर मुझपर जोर न डालें।''

''जोगिंदर को अब धन की सख्त ज़रूरत है। विदुर के साथ जगपति के आस्थान में जायेगा तो अवश्य ही धन स्वीकार करेगा। धन स्वीकार करके अपने आस्थान का अपमान करेगा। इससे उसकी बदनामी होगी।'' यों सोचकर चपल ने पूछा ''श्री जगपति, जोगिंदर से क्या आशा रखते हैं?''

''आर्य, हमारे आस्थान में उच्च स्तर पर कला-पोषण हो रहा है। नागरिक सुखी व संतुष्ट हैं। अपराधों की संख्या नहीं के बराबर है। रोगों से मुक्त हैं। मैं अपने राज्य की स्थिति से स्वयं बहुत ही संतुष्ट हूँ। मेरी इच्छा है कि ऐसे उत्तम प्रजा-पालक श्री जगपति की प्रशंसा में जोगिंदर चंद कविताएँ सुनायें। इसी उद्देश्य से मैं उन्हें अपने साथ ले जा रहा हूँ।''

जोगिंदर आत्माभिमानी है। धनार्जन के लिए किसी की प्रशंसा में कविता नहीं सुनायेगा। किसी से भीख नहीं माँगेगा। यह सत्य चपल भली-भांति जानता था। इसलिए उसने कहा ''मुझे कोई आपत्ति नहीं है। जोगिंदर की इच्छा पर सब कुछ निर्भर है।''

जोगिंदर ने जब ज्योतिपुर आस्थान जाने की स्वीकृति दे दी, तब चपल को आश्चर्य हुआ। उसने सोचा, जोगिंदर इस प्रस्ताव को ठुकरायेगा। किन्तु ऐसा नहीं हुआ। उसने विदुर से कहा "पंडितोत्तम, जिस प्रकार धन स्वीकार किये बिना तुमने अपने आस्थान का मान बनाये रखा, उसी प्रकार जोगिंदर भी अपने आस्थान की प्रतिष्ठा पर आँच आने नहीं देगा, उसके गौरव की रक्षा करेगा।" जोगिंदर जान गया कि चपल ने अप्रत्यक्ष रूप से उसे चेतावनी दी।

विदुर के साथ गये जोगिंदर को जगपति का आस्थान बहुत ही अच्छा लगा। उसे लगा कि उसकी शासन-पद्धति बढ़िया है। उसने दरबार में जगपति की प्रशंसा में सुंदर कविताएँ सुनायीं।

जगपति भी जोगिंदर से बहुत खुश हुआ। उसने कहा "जो चाहो, माँगो।"

"प्रभू, पंडितों की इच्छाओं को पूर्ण करना प्रभुओं का धर्म है। किन्तु कवियों को कुछ माँगने का अधिकार नहीं है, यह धर्म-सम्मत भी नहीं है। आप मेरी कविता का सम्मान जिस प्रकार करना चाहते हैं, कीजिये। निर्णय आपके हाथ में है" जोगिंदर ने कहा।

जगपति ने जोगिंदर को रेशमी वस्त्र की थैली में कुछ मूल्यवान मोती रखकर दिया और कहा "मुझसे जो हो सकता था, मैंने किया। आपकी योग्यता के समान पुरस्कार दे पाना मेरे लिए संभव नहीं है।"

बहुत ही प्रसन्न होता हुआ जोगिंदर वहाँ से निकल पडा। सीतापुर पहुँचने के बाद चपल स्वयं उससे मिला। उसने उन मूल्यवान मोतियों को भी देखा।

"बिदुर ने भरी सभा में कहा कि धन लेना अपने आस्थान का अपमान करना है। वह अपने आस्थान के प्रति इतना गौरव रखता

था। तुमने जगपति की दी भेटें स्वीकार करके हमारे आस्थान का अनादर किया, उसका गौरव मिट्टी में मिला दिया।'' चपल ने उसपर दोष मढ़ते हुए बड़ी ही रुखाई के साथ कहा।

जोगिंदर ने कहा ''प्रभू, आपको ग़लतफ़हमी हुई है। मैंने अपने आस्थान का गौरव और उन्नत किया है, घटाया नहीं। जगपति ने अपने यहाँ मुझे इसलिए बुलवाया कि मुझ जैसा कवि उनके आस्थान में नहीं है। धन, सोना, वस्तु, वाहन से मेरा मूल्य कहीं बढ़कर है, इसीलिए उनके बदले विदुर मुझे ले गया। ज्योतिपुर के आस्थान में मेरी बराबरी का कवि है नहीं। अगर होता तो मैं भी विदुर की ही तरह उस कवि को अपने साथ ले आता। अगर आप इस दृष्टि से देखें तो आपको मालूम हो जायेगा कि मैंने ऐसा करके सब प्रकार से अपने आस्थान की कीर्ति में चार चाँद लगाया।''

''तुम्हारा यों कहने का अर्थ यह हुआ कि हमारे आस्थान की कीर्ति तुम्हारे साथ जुडी हुई है। तुम अहंकारी हो। क्या यह सच नहीं?''

''अहंकारी कभी दूसरों की प्रशंसा नहीं करता। ज्योतिपुर के आस्थान में मैंने अपने आप को भूलकर जगपति की भरपूर प्रशंसा की।'' जोगिंदर ने कहा।

''तुम धन के पीछे पागल हो। धन पाने के लिए ही तुमने जगपति की प्रशंसा की।'' चपल ने और नाराज़ होते हुए कहा।

''मैंने जगपति की प्रशंसा की तो वह कविता बन गयी। उस कविता ने जगपति का स्पर्श किया और श्रेष्ठ मोती बन गयी। अपने मोतियों को अपने साथ मैं ले आया। अब स्पष्ट है कि जगपति ने मुझे कुछ दिया नहीं और मैंने कुछ लिया नहीं'' जोगिंदर ने कहा।

''अगर तुममें धन की आशा न हो, अहंकारी न हो तो यहाँ मेरी प्रशंसा क्यों नहीं करते? वह कविता यहाँ क्यों नहीं सुनाते?'' चपल ने पूछा।

''प्रभू, हर जगह मैं अपनी कविता सुनाता ही रहता हूँ। मेरी कविताओं की छींटें हमारे आस्थान में और जगपति के आस्थान में भी गिरीं। जल में गिरी बूंदें जल में मिश्रित हो गयी। सीपी में गिरी बूंदें मोती बन गये।'' जोगिंदर ने धीमे स्वर में कहा।

जो अंग्रेजों से लड़े ②

संन्यासी और फकीर विद्रोह

कथा : मीरा उगरा ◆ चित्र : गौतम सेन

'गोसाईं' और 'गिरि' उपनामवाले संन्यासियों की कुछ टोलियां 17 वीं सदी के अंत में लड़ाकू दस्तों के रूप में संगठित हो गयी थीं. आगे चल कर ये टोलियां भाड़े के सिपाहियों की तरह देशी राजा-नवाबों की ओर से उनके आपसी युद्धों में भाग लेने लगीं. फिर जब मुगल साम्राज्य कमजोर हो कर टूट-बिखर गया और देश में अराजकता फैल गयी, तब संन्यासियों और फकीरों के दस्ते अन्याय और अत्याचार के खिलाफ हथियार उठाने लगे. वे धनियों को लूटते, मगर गरीबों की मदद करते.

फकीरों के अनुयायियों में मुसलमान और हिंदू दोनों थे. शुरू में तो फकीर शांति और सहनशीलता का ही उपदेश दिया करते थे; लेकिन आगे चल कर उन्होंने उग्र रुख अपनाया तथा अन्याय और क्रूरता के खिलाफ बल का उपयोग करने का प्रचार शुरू किया.

18 वीं सदी में बिहार और बंगाल में ईस्ट इंडिया कंपनी की फौजों से इन संन्यासियों और फकीरों की मुठभेड़ होने लगीं.

---

22 अक्तूबर 1764 को बक्सर की लड़ाई में गोसाईं हिम्मत गिरि अपनी टोली के साथ मीर कासिम की फौज में शामिल हो गया और ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना से लड़ा. जब मीर कासिम हार गया –

सन 1770 के बाद के वर्षों में उत्तर बंगाल में मजनूं शाह नाम का फकीर बहुत प्रभावशाली बन गया.

जब अंग्रेजों के साथ एक मुठभेड़ में मजनूं शाह मारा गया...

तब उसके बेटे चिराग अली ने कमान संभाली. भवानी पाठक और देवी चौधुरानी उसके सहायक थे. ये दोनों अपने जीवनकाल में ही किंवदंतियों के विषय बन गये.

वे मालदार जमींदारों पर छापा मारते थे. एक दिन –

किश्ती उनके इंतजार में खड़ी थी. उसमें चढ़ कर वे वहां से खिसक गये...

कंपनी के सिपाहियों ने उनका पीछा किया –

वह देखो ! नाव तेज चलाओ !

लेकिन –

अरे, कहां गायब हो गये !

अब लौट चलना ही ठीक होगा.

इस बार वे पकड़े जाने से बाल-बाल बचे थे.

1788 में भवानी पाठक अपने कुछ साथियों के साथ पकड़ा गया और उसे मौत के घाट उतार दिया गया.

देवी चौधुरानी कुछ समय और काम करती रही, फिर एकाएक उसने अपनी कार्रवाइयां बंद कर दीं...

और वह न जाने कहां गायब हो गयी ! कोई नहीं जानता कि उसके बाद उसका क्या हुआ.

लेकिन आंदोलन जारी रहा. सुसंग परगने में करमशाह नाम के फकीर के उपदेश सुनने लोगों की भीड़ उमड़ने लगी.

करमशाह के अनुयायी **पागलपंथी** कहलाते थे. 1813 में करमशाह की मृत्यु के बाद उसका बेटा टीटू शाह पागलपंथियों का मुखिया बना.

जमींदारों और फिरंगियों को खतम कर दो !

सन 1825 में पागलपंथियों ने शेरपुर राज में गढ़ जरीपा पर कब्जा करके वहां अपनी सरकार कायम की, जो दो साल तक चली.

सन 1826 में एक विशाल अंग्रेजी फौज जमालपुर आयी और टीटू शाह की खोज में गांव और जंगल छानने लगी. अगले साल टीटू शाह पकड़ाई में आ गया. उसे आजीवन कैद की सजा हुई.

अंग्रेजों ने फकीरों और संन्यासियों का बड़ी निर्ममता से दमन किया. टोलियां बांध कर उनके इधर-उधर आने-जाने पर बंदिश लगा दी गयी. संन्यासी विद्रोह की कथा को ही आधार बना कर बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय ने **आनंदमठ** उपन्यास लिखा, जिसमें उन्होंने बाद में अपना मंत्रतुल्य गीत **वंदे मातरम्** शामिल किया.

महाभारत

राजसभा में भीष्म व कृपाचार्य ने दुर्योधन को हित-बोध किया। उन्होंने उससे कहा भी कि पांडवों को ढूँढ पाना कोई सुगम कार्य नहीं। यह प्रयत्न छोड़ो और अज्ञातवास की समाप्ति के बाद उन्हें उनका राज्य दे दो। किन्तु दुर्योधन ने उनकी एक न सुनी। भीष्म को इस बात का अपार दुख था कि उन्हें ऐसे जिद्दी, अहंभावी व महात्वाकांक्षी दुर्योधन का साथ देना पड रहा है। वे अपने आप पर लज्जित हुए। परंतु करें क्या? अधर्म का उन्हें साथ देना ही पड़ा। कौरवों के साथ रहकर उन्हीं का विरोध करना भी तो अधर्म है।

त्रिगर्त राजा सुशर्मा ने दुर्योधन से कहा "मत्स्य देश के राजा ने बहुत बार मुझे परेशान किया। वह मेरे राज्य में व्याप्त अशांति का कारक भी है। उसका असीम बलवान सेनापति कीचक गंधर्वों के हाथों मारा गया। अब मत्स्य देश अनाथ है। उसकी रक्षा करनेवाला कोई नहीं रहा। तुम चाहो तो उस देश पर आक्रमण करेंगे; उनसे युद्ध करेंगे। बड़ी ही सुगमता से वह देश हमारे अधीन हो जायेगा। वहाँ का धन, रत्न, सोना और उनकी गायें लूटेंगे। यह सब पाकर तुम्हारे बल की और वृद्धि होगी। मैं भी शत्रु से छुटकारा पाऊँगा।" कर्ण ने सुशर्मा के प्रस्ताव का समर्थन किया।

दुर्योधन ने अपने भाई दुश्शासन से कहा "सेना सन्नद्ध करो। सुशर्मा त्रिगर्त की सेनाओं को लेकर एक तरफ़ से मत्स्य देश पर हमला करेगा और गायों को अपने अधीन कर लेगा। दूसरे दिन दूसरी तरफ़ से हम आक्रमण करेंगे।"

उस योजना के अनुसार कृष्ण सप्तमी के दिन सुशर्मा अपनी सेनाएँ लेकर हमला करने निकल पड़ा। अष्टमी के दिन कौरव सेना भी निकल पडी।

के समय त्रिगर्त राजा सुशर्मा ने विराट से युद्ध करते हुए उसे पकड़ लिया और अपना बंदी बना लिया। सेना में हाहाकार मच गया।

तब धर्मराज ने भीम को आदेश दिया कि युद्ध करो और विराट राजा को छुड़ाकर ले आओ। उसने भीम को यह कहकर सावधान भी किया कि उसका असली रूप प्रकट न हो। शत्रु-पक्ष को मालूम न हो कि भीम स्वयं युद्ध करने आया। भीम ने सुशर्मा से लड़ाई की, उसे खूब मारा-पीटा, हराया और उसे क़ैद कर लिया। विराट राजा को छुड़ाया। किन्तु क़ैदी सुशर्मा को धर्मराज ने मुक्त कर दिया।

विराट ने अपनी जीत का समाचार विराट नगर को भिजवाया और अपनी गायों को नगर की ओर ले जाने के काम में व्यस्त हो गया। उस समय दुर्योधन ने अपनी अपार सेना के साथ भीष्म, द्रोण, कर्ण, शकुनि दुश्शासन, अश्वथ्थामा आदि महावीरों को लेकर दूसरी तरफ़ से मत्स्य देश में प्रवेश किया और गायों के झुंड को पकड़ लिया।

पशुपालकों का प्रधान यह समाचार सुनाने घोड़े पर सवार होकर विराटनगर गया। भूमिंजय नामक राजकुमार से मिलकर कहा "राजकुमार, कौरवों ने हमारी छे हज़ार गायों को पकड़ लिया। महाराज कहते रहते हैं कि आप महाशूर हैं। आइये और हमारी गायों को छुड़ाइये। कौरव सेना को छिन्नाभिन्न कर दीजिये।"

भूमिंजय, उत्तर के नाम से प्रसिद्ध था। पशुपालक जब यह समाचार सुना रहा था तब वह स्त्रीयों के बीच बैठा हुआ था।

इस बीच विराटनगर में रहस्यपूर्वक जीवन-यापन करते हुए पांडवों के अज्ञातवास की अवधि भी पूरी हो गयी। त्रिगर्तों ने लाखों की संख्या में गायों को अपने वश कर लिया। पशुपालकों ने राजा विराट को यह समाचार भेजा और उससे प्रार्थना की कि वे शीघ्र आयें और अपनी गायों की रक्षा कर लें।

विराट ने अपनी सेना इकट्ठी की और अपने भाई शतानीक और मदिराक्ष आदि वीरों को लेकर युद्धक्षेत्र जाने सन्नद्ध हो गया। विराटराजा ने सोचा कि धर्मराज, भीम, नकुल, सहदेव भी साथ आयें तो अच्छा होगा, इसलिए उसने उन चारों के लिए चार रथ भी तैयार कराये।

विराट की सेना त्रिगर्त सेना के साथ भिड़ गयी। दोनों में घमासान युद्ध हुआ। संध्या

सारथी बना ले ।''

द्रौपदी सकुचाती हुई उत्तर के पास आयी और अर्जुन ने जो कहा, दुहराया । नपुंसक बृहन्नला की शक्ति पर उसे विश्वास नहीं हुआ । परंतु जब द्रौपदी ने ज़ोर दिया और आश्वासन दिया कि बृहन्नला रथ चलाने में प्रवीण है और उसकी जीत निश्चित है तो उसने मान लिया । उत्तर की बहन उत्तरा ने बृहन्नला से विनती की कि वह अपने भाई का सारथी बने ।

अब उत्तर और बृहन्नला युद्धक्षेत्र जाने तैयार हो गये । उत्तरा और उसकी सहेलियों ने बृहन्नला से कहा ''जब आप भीष्म, द्रोण आदि पर विजय पायेंगे तब हमारे गुडियों के लिए उनके मुलायम रंग-बिरंगे कपड़े लेते आइयेगा ।''

अर्जुन ने हँसते हुए कहा ''उत्तर जीत जाएँगे तो अवश्य ले आऊँगा ।''

रथ नगर के बाहर आया । उत्तर ने अर्जुन से कहा ''बृहन्नला, रथ को कौरव सेना के बीच ले जाओ । हमें उन्हें हराना है और गायों को वापस ले जाना है ।'' अर्जुन ने तेज़ी से रथ चलाया । वे शमी वृक्ष के निकट गये, जो श्मशान के बीचों बीच था । दूरी पर कौरव सेना समुद्र की तरह विशाल दिखायी देने लगी । उस सेना की चहल-पहल से उड़ी धूल आकाश को छू रही थी । यह दृश्य देखकर उत्तर घबरा गया ।

''बाप रे, मैं इस सेना को कैसे हरा सकूँगा । देवता भी इतनी बड़ी सेना को हरा नहीं सकते । पिताश्री सेना सहित त्रिगर्त पर आक्रमण करने गये हुए हैं । मैं नगर में अकेला

इसलिए उसे लगा कि मैं सचमुच योद्धा हूँ । उसने चुटकी बजाते हुए कहा ''यह तो मेरे बाये हाथ का खेल है । गायों को छुड़ाना कोई कठिन कार्य नहीं । किन्तु मुझे इस बात का खेद है कि अब कोई ऐसा सारथी मेरे पास नहीं है, जो युद्ध-नीति को जानता हो; जो रथ शत्रुओं के बीच ले जा सके । अच्छे से सारथी को ढूँढ़िये ।''

उत्तर जिन स्त्रीयों के बीच बैठा हुआ था, उनमें ब्रहन्नला के रूप में अर्जुन भी वहाँ मौजूद था । उसने हिसाब लगाया और इस सत्य को जान गया कि अज्ञातवास की अवधि पूरी हो गयी । उसने द्रौपदी से कहा ''तुम उत्तर से कहो कि बृहन्नला कभी अर्जुन का सारथी था; अर्जुन ने उसके कौशल की भरपूर प्रशंसा भी की थी । उससे कहना कि मुझे अपना

रह गया। भीम, द्रोण तथा आदि शूरों से अकेले कैसे लड़ सकूँगा ? उन्हें कैसे हरा पाऊँगा ? बृहन्नला, रथ घुमाओ।'' कहकर उत्तर अपने को असहाय महसूस करने लगा।

''राजकुमार, डरो मत। तुम्हारी यह स्थिति देखकर शत्रु हँसेंगे। स्त्रीयों के सम्मुख डींग हाँकते रहे कि विजय की वरमाला पहनकर लौटूँगा। मैं शत्रुओं के सामने रथ ले जाऊँगा। कुछ भी हो, जीते बिना वापस नहीं लौटूँगा।'' अर्जुन ने गंभीरता से कहा।

''कौरव हमारी गायों को ले जाते हों, ले जाने दो; अंत:पुर की स्त्रीयाँ मुझे देखकर हँसती हों तो हँसने दे, पर मैं किसी भी हालत में युद्ध नहीं करूँगा'' कहता हुआ उत्तर रथ से कूद पडा। धनुष-बाण नीचे फेंक दिये और नगर की ओर भागने लगा।

''युद्ध में मरना ही है तो मरो, किन्तु पीठ दिखाकर भाग रहे हो?'' कहता हुआ अर्जुन रथ से उतरा। उत्तर का पीछा किया। बृहन्नला का आकार देखते हुए, यह न जानने के कारण कि बृहन्नला ही अर्जुन है, कौरव की सेना ठठाकर हँसने लगी।

इतने में अर्जुन ने उत्तर के केश पकड़कर रोक लिया। उत्तर छोड़ने के लिए गिड़गिड़ाने लगा। किन्तु अर्जुन ने उसकी एक न मानी और उसे रथ के पास ले आया। ''मैं युद्ध करूँगा और गायों को छुड़ाऊँगा। बस, तुम रथ चलाओ'' कहते हुए अर्जुन ने उसे रथ में चढ़ा दिया।

जब रथ शमी वृक्ष के पास आया, तब अर्जुन ने कहा ''राजकुमार, हमारे पास जो हथियार हैं, वे व्यर्थ हैं। उनका कोई प्रयोजन

नहीं। तुम इस वृक्ष पर चढ़ो। इसमें पांडवों ने अपने हथियार छिपाये। उनमें अर्जुन का गांडीव भी है। ऊपर का कपडा निकाल दो तो सब हथियार दिखायी देंगे।''

उत्तर वृक्ष पर चढ़ गया। वस्त्र निकाला। हथियारों को देखकर वह चकित रह गया। दुख प्रकट करते हुए कहा ''मायावी जुएँ में हारकर पांडवों ने राज्य खो दिया। पता नहीं, द्रौपदी और पांडवों पर क्या गुज़रा? यह भी मालूम नहीं कि वे अब कहाँ हैं।''

''मैं अर्जुन हूँ। तुम्हारे पिता की सभा के कंक धर्मराज हैं। तुम्हारा रसोइया वल्लभ ही भीम हैं। अश्वों की देखभाल करनेवाला ही नकुल है। सहदेव पशु-पालक है। कीचक की हत्या हुई सैरंध्री के कारण। वही द्रौपदी है।'' अर्जुन ने रहस्य खोल दिया।

पूरब की ओर घूमकर अस्त्रों की पूजा की। गांडीव में उसने प्रत्यंचा चढ़ायी और झंकृत किया। इससे महाध्वनि उत्पन्न हुई। अर्जुन ने शंख फूंका, जिसे सुनकर उत्तर भयभीत हो गया। ऐसा नाद पहले उसने कभी नहीं सुना।

अर्जुन का रथ जब अपनी ओर आने लगा तो द्रोणाचार्य ने दुर्योधन से कहा "वह आगंतुक अवश्य ही अर्जुन ही है।"

दुर्योधन ने कहा "अज्ञातवास की अवधि की पूर्ति के पहले ही अर्जुन प्रकट हो गया। पांडवों को अब और बारह वर्षों तक वनवास करना होगा। शायद उन्हें मालूम नहीं होगा कि अभी अवधि पूरी नहीं हुई। हो भी सकता है, हमारा हिसाब ग़लत हो। भीष्म ही बता सकेंगे कि अज्ञातवास की अवधि पूरी हुई या नहीं। त्रिगर्तों ने कल दक्षिण में मत्स्य के गोगणों को अपने अधीन कर लिया होगा। आज सबेरे हमने उत्तर में उनकी गायों को पकड़ लिया। गायों को छुड़ाने के लिए अर्जुन आ रहा है। पता नहीं, मत्स्य सेना उसके पीछे-पीछे आ रही है अथवा नहीं। अर्जुन से हम डटकर युद्ध करेंगे।"

"अवधि पूर्ण हुई न होती तो अर्जुन प्रकट न होता। वह गायों को छुड़ाये बिना नहीं लौटेगा। अब युद्ध अवश्यभावी है।" द्रोण ने कहा।

भीष्म ने दुर्योधन से कहा "हर पाँच सालों में एक बार दो-दो अधिक माह आते हैं। पाँडवों के वनवास तथा अज्ञातवास के तेरह वर्षों की अवधि में पाँच महीने और बारह दिन अधिक आये हैं। इस गिनती के अनुसार

उत्तर पहले अर्जुन की बातों का विश्वास नहीं कर सका। अर्जुन ने जब उसे बताया कि उसके क्या-क्या नाम हैं और उन नामों से वह क्यों पुकारा गया, तब जाकर उसे विश्वास हुआ। वह अर्जुन के पैरों पर गिर पड़ा और कहने लगा "आपके परिचय से मैं धन्य हो गया। मेरा जीवन सार्थक हो गया। अनजाने में मैंने अनाप-शनाप बक दिया होगा। क्षमा कीजिये। अब मेरा भय दूर हो गया। अब जिस किसी भी सेना के सामने रथ ले जाने को कहेंगे, निर्भीक ले जाऊँगा।"

अर्जुन ने उत्तर से आयुध रथ में रखवाये और कहा "देखते जाना, तुम्हारे शत्रुओं का मैं कैसे नाश करता हूँ।" केवल गांडीव मात्र अपने हाथ में लिया। फिर अपने हाथों से कंकण निकाल डाले और केश बाँध लिये।

पांडवों का अज्ञातवास काल पूरा हो गया। यह जानकर ही अर्जुन प्रकट हुआ है। हमसे युद्ध करने आ रहा है। युद्ध में जय-पराजय का निर्णय साध्य नहीं है। अतः तुम्ही निर्णय कर लो कि पांडवों को न्यायपूर्वक राज्य दोगे या उनसे युद्ध करोगे। फ़ैसला तुम्हारे हाथ में है।''

''मैं पांडवों को कदापि राज्य नहीं दूँगा। युद्ध करने सन्नद्ध हो जाइये'' दुर्योधन ने अपना निर्णय सुनाया।

''तो एक काम करो। अपनी सेना के चौथे भाग को अपने साथ लेकर हस्तिनापुर चले जाओ। एक और चौथे भाग की सेना गायों को लेकर तुम्हारे पीछे-पीछे आयेगी। शेष आधी सेना को लेकर मैं, द्रोण, कर्ण, अश्वथ्थामा, कृपाचार्य, अर्जुन से युद्ध करेंगे'' भीष्म ने कहा।

सबको यह योजना सही लगी। दुर्योधन ने पितामह भीष्म के इस प्रस्ताव को स्वीकार किया। भीम ने युद्ध-व्यूह रचा और निर्णय किया कि किस योद्धा को किस स्थल पर, किस दिशा में खड़ा होना चाहिये।

व्यूह में खड़ी कौरव सेना की तरफ़ अर्जुन का रथ बढ़ा। अब अर्जुन स्पष्ट रूप से दिखायी देने लगा। अर्जुन ने उत्तर से कहा ''तेरा बाण जहाँ जाकर गिरेगा, वहाँ रथ रोको। देखता हूँ कि वह दुष्ट दुर्योधन कहाँ है। शेष लोगों से मुझे कुछ लेना-देना नहीं है। मैं उसपर ही विजय पाऊँगा। बाद सभी को पराजित ही समझो।''

उसने द्रोण, अश्वथ्थामा, कृपाचार्य, कर्ण को उत्तर को दिखाया, परंतु दुर्योधन दिखायी नहीं पडा।

''लगता है, अपने प्राणों की रक्षा के लिए गायों सहित दक्षिण मार्ग से हस्तिनापुर पहुँचने निकल गया। उत्तर, दुर्योधन जिस दिशा में गया, उस दिशा में रथ घुमावो। उसका सामना करूँगा और गायों को छुड़ाऊँगा'' अर्जुन ने कहा।

कृपाचार्य ताड़ गया कि अर्जुन उन सबको छोड़कर किसी और दिशा में क्यों अग्रसर हो रहा है। वह चिल्ला पडा ''अर्जुन दुर्योधन को पकड़ने जा रहा है। दुर्योधन अकेले अर्जुन का सामना करने की शक्ति नहीं रखता, उसके सम्मुख टिक नहीं सकता। अतः हम सब दुर्योधन की सहायता करने निकल पडे।''

'चन्दामामा' की ख़बरें

सोचनेवाला रोबो!

सुप्रसिद्ध जापानी संस्था होंडा ने अब पि-२ नामक मानवीय रोबो का निर्माण किया है। इस रोबो की लंबाई है - छे फुट, वज़न है २१० कि.ग्राम । यह रोबो व्योमगामियों की तरह पोशाक पहना हुआ दिखायी देता
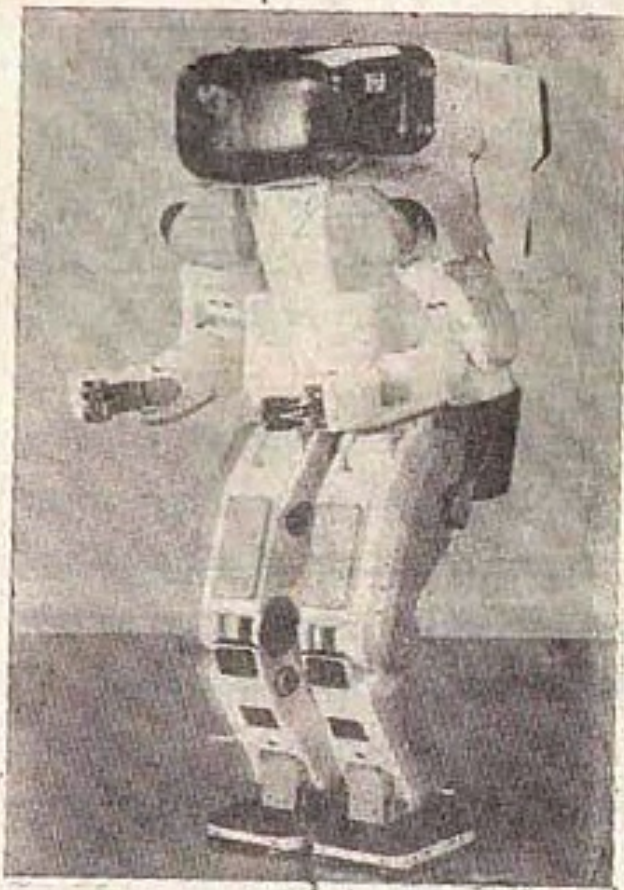
है। यह समतल भूमि पर आगे और पीछा भी आ-जा सकता है। सीढ़ियों पर चढ़ सकता है। कोई गिराना चाहे तो यह उसका सामना कर सकता है और अपने को संतुलित रख सकता है। जरूरत पड़ने पर यह अपने दोनों हाथों का उपयोग भी कर सकता है। टोक्यो विश्वविद्यालय के रोबोटिक्स विभाग के प्रोफेसर सुनुमू व टोली ने इसका आविष्कार किया ।

अद्‌भुत स्मरणशक्ति

केरल राज्य के मंजेरी में सूफिल नामक बालक दूसरे दर्जे में पढ़ रहा है । महीना, तारीख़ बताइये, बस वह तुरंत बता देगा कि फलाना वार है। १९९७ के ३४४ दिनों को क्षण भर में बता देगा । क्या गणित-शास्त्र में उसका ठोस ज्ञान है? परंतु ऐसी कोई बात नहीं। पढ़ाई में भी साधारण विद्यार्थी से कम ज्ञानी ही कहा जा सकता है। किन्तु उसका कालेंडर परिज्ञान मात्र आश्चर्यजनक साबित हुआ है। घर में, बाहर, गाँव में, राज्य में, देश में जो भी मुख्य घटनाएँ घटीं, उनकी तारीख़ें सही-सही बताता है। ऐसी स्मरणशक्ति बिरले ही होती है।

म्यूजियम

अमेरीका के आर्मिंगटन में हाल ही में बच्चों के लिए एक समाचार म्यूजियम की स्थापना हुई। इस म्यूज़ियम में प्रवेश करने पर लगेगा कि हमने मानों समाचार-पत्र कार्यलय में प्रवेश किया हो। आप चाहें तो वहीं का वहीं संवाददाता बन सकते हैं, संपादक का काम संभाल सकते हैं । वहाँ आयोजित कम्प्यूटरों की सहायता से पत्रिका का प्रकाशन भी कर सकते हैं। संसार के कोने-कोने से आये समाचारों में से आवश्यक समाचारों को चुन सकते हैं और स्वयं संपादक होने का भाव महसूस कर सकते हैं। इसी भवन के दूसरे विभाग में टी.वी. समाचार सुनानेवाला का, व्याख्याता का, चाहें तो प्रमुख पत्रिका के संपादक से साक्षात्कार के कार्यक्रमों में भी भाग ले सकते हैं। संसार में गुज़रती हुई घटनाओं तथा तत्संबंधी समाचार जानने के लिए यहाँ एक बहुत ही बड़ा 'ग्लोब' है। जन्म की तारीख़ बताने पर बग़ल के टी.वी. पर उस समाचार-पत्र के प्रथम पृष्ट देख सकते हैं, जिसे हम देखना और पढ़ना चाहते हैं।

लेपाक्षी देवालय

विजयनगर के राजाओं ने दक्षिण भारत में अद्भुत शिल्प-कला वैभव से विराजमान अनेकों देवालयों का निर्माण किया। ऐसे देवालयों में से लेपाक्षी देवालय एक है, जो आंध्र प्रदेश के हिन्दूपुर नामक शहर से पंद्रह कि.मीटरों की दूरी पर स्थित है। इसका निर्माण १५३८ में हुआ। विजयनगर के राजाओं के काल की शिल्पकला का यह एक अद्भुत नमूना है। 'लेपाक्षी' एक विशिष्ट शिल्प-कला संप्रदाय है। इस मंदिर को लेकर अनेकों कथाएँ प्रचलित हैं। यह आलय एक छोटी-सी पहाड़ी पर निर्मित है। पश्चिमी दिशा में भिन्न-भिन्न शिल्पों से भरे हुए स्तंभों का एक विशाल मंडप है। मंडप की छत के निचले भाग में प्रकाशमान लाल, पीले व हरे रंग में कितने ही चित्र चित्रित हैं। एक ही शिला में चित्रित सात फनों के सर्पराज का चित्र यहाँ का एक विशिष्ट आकर्षण है।

काले पथ्थर पर छीले गये बृहदाकार का एक शिवलिंग आलय के प्रांगण में है। मंदिर के आधे किलो मीटर की दूरी पर सुप्रसिद्ध 'लेपाक्षी नंदी' मूर्ति है। यह एक ही लाल शिला पर छीली गयी अद्भुत मूर्ति है। कहा जाता है कि यह मूर्ति हमारे देश की सबसे बड़ी नंदी मूर्ति है। यह हमारे शिल्पकारों के शिल्पकला-नैपुण्य का अदभुत कला-खंड है।

पुराणकाल के राजा :

कौशिक

कौशिक उन धर्मप्रभुवों में से थे, जिन्होंने जनता के सुख-संतोष को सर्वोच्च स्थान दिया। प्रजा उन्हें बहुत चाहती थी, उनका बड़ा ही आदर करती थी। शासन-कार्यों से निवृत्त होकर जब रात को वे शय्या पर लेटते थे तब उनका मुख विवर्ण हो जाता था। अपने कर्तव्यों पर विचार करते हुए बड़ी ही पीड़ा महसूस करते थे। कारण-आधी रात के समय अपनी पत्नी की आँखों के सामने ही देखते-देखते मुर्गे के रूप में परिवर्तित हो जाते थे।

प्रभात के पूर्व ही उन्हें पूर्व रूप प्राप्त हो जाता था। अतः यह रहस्य रानी के अलावा किसी और को मालूम नहीं था। यों समय गुज़रता गया।

एक बार गालव नामक एक मुनि राजदंपति को देखने आये। रानी ने उनका स्वागत-सम्मान किया और राजा की विचित्र दुस्थिति का विवरण दिया। इस समस्या का परिष्कार-मार्ग सुझाने की प्रार्थना की। मुनि ने क्षण भर के लिए आँखें बंद कर लीं और ध्यान-मग्न हो गये। आँखें खोलने के बाद मुनि ने कहा "पूर्व जन्म में राजा को मुर्गे का मांस का बड़ा ही चाव था। यद्यपि वे दो-तीन मुर्गों का मांस ही खाते थे परंतु असंख्य मुर्गों को मार डालते थे। उनमें से जो बढ़िया होता था, चुनते थे। उनकी दुराशा व क्रूर प्रवृत्ति पर क्रोधित होकर ताम्रचूड नामक मुर्गों के नायक ने उन्हें शाप दिया "अगले जन्म में रातों में मुर्गा वन जाओगे।" उस शाप ही के कारण राजा को इस विचित्र स्थिति में से गुज़रना पड़ रहा है। समस्त पापों को दूर करनेवाले उस परमशिव की पूजा करने पर शाप-मुक्त हो सकेंगे।"

राजा ने एक गुफ़ा में रहकर कठोर तपस्या की। परमशिव ने उनकी तपस्या पर प्रसन्न होकर उन्हें शाप-मुक्त किया। संतुष्ट लौटे राजा रात के समय मुर्गे के रूप में परिवर्तित होने की दुस्थिति से बच गये। उपरांत उन्होंने दैवभक्ति तथा जीव-कारुण्य का विपुल प्रचार किया।

क्या तुम जानते हो?

अतिप्राचीन शब्दकोश

आज विविध भाषाओं में, विभिन्न परिमाणों में शब्दकोश हैं। उनसे शब्दों के अर्थ, उनके उच्चारण, उपयोग आदि जाने जा सकते हैं। प्रथम अंग्रेज़ी कोश का संकलन किया, १७७५ में डा. शाम्यूल जानसन ने। इसे कहते हैं - 'अंग्रेज़ी भाषा शब्दकोश'। फिर भी हम अतिप्राचीन शब्दकोश के बारे में जानना चाहें तो तो हमें ई.स. चौथी शताब्दी में जाना होगा। पर्शियन भाषा में ५००० शब्दों से यह कोश बद्रुद्दीन इब्राहीम नामक संकलक ने भारतीय शासक के शासन-काल में संकलित हुआ। वैद्य, भूगोल, कृषि, जंतु, पुष्प आदि विभागों से संबंधित शब्दों ने इसमें जगह पायी।

इससे भी प्राचीन शब्द-कोश तेरहवीं शताब्दी में बगदाद के एक गंथालय में थे। किन्तु मंगोल सम्राट चेंघिच खान ने इस ग्रंथालय को जला डाला। वह ग्रंथालय तीन दिनों तक जलता रहा। हाथ से लिखी गयीं कितनी ही प्रतियाँ भस्म हो गयीं।

इंद्रधनुष

रेग्गी

रेग्गी सामान्य जनता का प्रिय संगीत है। १९६० में जमैका में शुरु हुआ और वहाँ के निवासी वेस्ट इंडियनो में यह तेज़ी से फैला। हर 'बार' में दूसरे और चौथे 'कौंट' में, 'हेवी बीट' के साथ रेग्गी का अपना 'रिथम' है। रेग्गी गीत जमैका भाषा में करीबियन जीवन-संस्कृति को बतलानेवाले होते हैं। कुछ रेग्गी रिकार्ड बिना गात्र के केवल ब्याकिंग ट्राक में होते हैं। इन्हें 'डब' रेग्गी कहते हैं। रेग्गी के डिस्कों में डिस्क जाकी 'डब' रेग्गी को बजाते हैं। फिर तेज़ी से शब्दों को जोड़कर गाये जाते हैं। स्वर्गीय बाब मार्ली नामक गायक ने संसार भर में रेग्गी संगीत को व्याप्त व प्रसिद्ध किया।

स्वतंत्रता की स्वर्णजयंती के अवसर पर 'चन्दामामा' की भेंट

प्रथम स्वतंत्रता-संग्राम

(व्यापार करने भारत में आयी ईस्ट इंडिया कंपनी ने स्थानीय राजाओं की अनुमति पाकर क़िले बनाये। कुयुक्तियों का प्रयोग करके स्थानीय राजाओं से छोटे-छोटे प्राँतों को अपने अधीन करके अपना आधिपत्य जमाती रही। गोद लेना अवैधानिक घोषित किया और इस बहाने की आड़ में चूँकि पेशवा बाजीराव दत्तक पुत्र है, इसलिए नाना साहेब को उनका वारिस मानने से इनकार कर दिया। झान्सी का राजा निस्संतान मर गया, इसलिए कंपनी ने घोषणा की कि उस राज्य पर कंपनी का ही अधिकार होगा। कंपनी की इस चर्या पर झान्सी लक्ष्मीबाई तीव्र रूप से क्रोधित हुई। कंपनी की व्यवहार-शैली से असंतुष्ट देश की जनता उसका विरोध करने लगी। दिन-ब-दिन कंपनी के प्रति जनता का क्रोध तीव्र होता गया।) - बाद

खिली चाँदनी की रात थी। चमकते वस्त्र, रत्नों से भरी पगड़ी पहने एक फुर्तीला युवक घोड़े पर सवार होकर मेरठ के सरहदों पर प्रवाहित होती हुई गंगा नदी के तट पर आया। बरगद के वृक्ष के पास आते ही वह घोड़े से कूद पड़ा।

जैसे ही वह घोड़े से कूदा, चारों ओर से झाड़ियों के पीछे से लगभग पच्चीस सिपाही प्रकट हुए और सामने आकर उसे नमस्कार किया। उनमें से एक ने कहा "पेशवा का स्वागत। पेशवा नाना साहेब का सुस्वागत।"

"भाइयो, आपका प्रेम पाकर मैं धन्य हो गया, मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। आप लोग सचमुच मुझे चाहते हों तो आपको अपने वर्तमान यजमान को छोड़ना होगा। शुष्क वचनों व अर्थहीन आदर-भावों पर मुझे कोई विश्वास नहीं।" नाना साहेब ने गंभीर स्वर में कहा।

"गोरों को हम अपना यजमान मान नहीं रहे हैं। आप ही हमारे यजमान हैं। आपकी आज्ञा का पालन करने के लिए हम सन्नद्ध

हैं'' एक सिपाही ने कहा।

''प्रभू, हर दिन हम अपमानित हो रहे हैं। वे हमारे भगवानों की खिल्ली उड़ा रहे हैं। मुसलमान भाइयों के विश्वासों पर भी वे उँगली उठा रहे हैं, उनका मज़ाक कर रहे हैं। एक दिन मेरे एक मित्र ने उनके पुजारी से निर्भीकतापूर्ण कहा ''हम सब मज़हबों का आदर करते हैं। हममें से किसी ने भी आपके भगवानों पर कीचड़ नहीं उछाली। आप लोग क्यों हमपर और हमारे भगवानों पर ताने कस रहे हैं?'' मेरे मित्र की इन बातों का कोई जवाब नहीं मिला। बस, कोडे से उसे मारते-पीटते रहे। जब तक वह बेहोश नहीं हुआ, तब तक वे सताते रहे। पूरा बदन जख्मों से भर गया।'' एक और सिपाही ने बताया।

''पेट भरने के लिए हम सेना में भर्ती हुए। हममें से कुछ सिपाही अपने बल-बूते के आधार पर छोटे-छोटे अधिकारी बने। किन्तु समान ओहदों पर काम करनेवाले गोरों को जो वेतन दिया जा रहा है, उसका चौथा हिस्सा भी उन्हें दिया नहीं जा रहा है। यह भी कोई न्याय हुआ ? ऐसे पक्षपातपूर्ण व्यवहार और अन्याय हम कब तक सहते रहें?'' एक और सिपाही ने जोश में आकर पूछा।

''अब एक और मुश्किल का सामना करना पड़ रहा है। कंपनी का आदेश है कि नयी बंदूकों का ही उपयोग हो। इन बंदूकों में जिन कारतूसों का उपयोग हो रहा है, उनपर गाय की और सुवर की चर्बी का लेपन हो रहा है। उनका उपयोग करने के पहले हमें अपने दांतों से उन्हें काटना होगा। ऐसा करने से हिन्दु, मुसलमान दोनों अपना-अपना धर्म खो रहे हैं'' चौथे सिपाही ने बहुत ही दुख-भरे स्वर में कहा।

''मंगलपांडे की आत्मा हर रात मुझपर हावी हो रही है, मुझे सता रही है। मानता

नहीं सके। हठात् वे कमरे से बाहर आये और चिल्लाने लगे'' चलो, विद्रोह करें।'' सिपाहियों ने उनकी पुकार सुनी और वे बाहर आने ही वाले थे, सार्जर मेजर हघुसन ने मंगलपांडे को पकडना चाहा। पर मंगलपांडे ने उसपर गोली चलायी और उसे मार डाला। इतने में वहाँ आये एक और अंग्रेज अधिकारी ने छुरी भोंककर मंगल पांडे को घायल कर दिया। इसके बाद उन्हें फाँसी पर चढ़ा दिया।

नाना साहेब ने सबकी बातें ग़ौर से सुनीं। फिर कहा ''भाइयो, मंगलपांडे को मैं हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित कर रहा हूँ। उनके धैर्य-साहस, त्याग और बलिदान हममें स्फूर्ति भरते है। परंतु उनकी तरह हमें जल्दबाज़ी नहीं करनी चाहिये। भाव-आवेश में आकर हमें अपना मानसिक संतुलन खोना नहीं चाहिये। आवेश-पूरित होने पर हम अपना प्राण-त्याग कर लें, पर उससे कोई लाभ पहुँचनेवाला नहीं है। हम चाहते हैं कि गोरों से हम अपने को आज़ाद करें। उनके सेवक बनकर ज़िन्दा न रहें। उनसे सदा के लिए हम छुटकारा पा लें, यही हमारा लक्ष्य है। हम सब मिलजुलकर रहें और ऐन मौक़ा देखकर यहाँ, वहाँ सब जगह एक साथ आक्रमण करें तो हम अपने लक्ष्य को साध सकते हैं। क्या मेरी बातें आप सबकी समझ में आयीं?''

''हाँ, हाँ, हम सब समझ गये'' मुक्तकंठ से सबने कहा। ''बहुत अच्छा। विद्रोह की तारीख़ तय हो चुकी है। सही समय पर मैं वह तारीख़ आपको सूचित करूँगा। तब तक सहनशील रहिये'' नाना साहेब ने कहा।

एक सिपाही ने पूछा ''तब तक क्या हम

हूँ कि मंगलपांडे धैर्यवान हैं, उत्तम हैं, लेकिन जल्दबाज़ स्वभाव के हैं। वे मुझसे पूछते ही रहते हैं कि मातृभूमि को गोरों से कब विमुक्त करोगे? कब तक यों सोते ही रहोगे?'' एक और सिपाही ने आपबीती बतायी।

मंगल पांडे के बारे में नाना साहेब अच्छी तरह जानते हैं। बारकपुर के मंगलपांडे अत्यंत साहसी थे, धैर्यवान थे, निडर थे। जिस शिबिर में वे रह रहे थे, चर्बी से लेपी गयी गोलियों का ही इस्तेमाल करना पड़ा। सिपाहियों ने अंग्रज़ अधिकारियों से प्रार्थना की कि ऐसी बंदूकों का उपयोग करने पर ज़ोर न दिया जाए, अनिवार्य बनाया न जाए। किन्तु उन्होंने उनकी बातों पर कोई ध्यान ही नहीं दिया। अपनी इस दयनीय स्थिति पर व्यथित होते हुए मंगलपांडे रात भर सो

चुप रह जाएँ? अपना समय व्यर्थ करें?''

''व्यर्थ न करें। समय का सद्विनियोग कीजिये। आप सबको चाहिये कि ऐसे सिपाहियों को समझाने के प्रयास में मग्न हो जाएँ, जो अब तक संदिग्धावस्था में पड़े हुए हैं, निर्णय नहीं कर पा रहे हैं कि किस तरफ झुकें। उन्हें आप समझाइये, वास्तविकता का स्पष्टीकरण कीजिये। अपनी ओर मोडिये। साथ ही स्वयं सोचिये कि समय आने पर विद्रोह कैसे करना है? रहस्यपूर्वक योजनाएँ बनाते रहिये'' नाना साहेब ने उन्हें मार्ग सुझाया।

''नाना साहेब ज़िन्दाबाद'' नारे लगाये।

''रुक जाइये'' कहकर हाथ उठकर उन्हें मना करते हुए नाना साहेब ने कहा ''शत्रुओं को बलहीन समझना हमारी मूर्खता साबित होगी। दूर देश से आकर उन्होंने हमारे भू-भागों को अपने अधीन कर लिया, हम लोगों को एक-दूसरे से अलग किया, यही उनकी अक़्लमंदी, चालाकी, धूर्तता का जीता-जागता उदाहरण है। उनके गुप्तचरों का हमारे कार्य-कलापों की जानकारी पा लेने का ख़तरा है। हमें बड़ी ही सावधानी बरतनी होगी। इस तथ्य को भुलाना मत।'' नाना साहेब ने उन्हें यों चेतावनी दी। सिपाही सिर झुकाकर नाना साहेब को प्रणाम करके चुपचाप वहाँ से चले गये।

नाना साहेब ने विविध प्राँतों में रहस्य-पूर्वक पर्यटन किया। राजाओं, सामंतों, संस्थानाधीशों से स्वयं मिले। होनेवाले विद्रोह में भाग लेने उन्हें आह्वानित किया; उनकी सहायता माँगी। जहाँ-जहाँ वे स्वयं नहीं जा सके, वहाँ उन्होंने अपने सेनापति तांतिया

तोपी को तथा मंत्री अजिमुल्ला खान को भेजा। उनका छोटा भाई बालासाहेब बड़ी ही सतर्कता से उनकी देखभाल करने लगे। अपने बड़े भाई की सुरक्षा में जी-जान से लगे रहे।

एक दिन दोनों भाई जब चित्तौर के अपने राजभवन के पास पहुँचे तब बाला साहेब ने कहा ''बड़े भैय्या, आप बहुत थक गये हैं। आपको आराम करना चाहिये।''

इतने में एक अधिकारी सामने आया और कहा ''सरकार, रानी झान्सी लक्ष्मीबाई पधारी हैं।''

नाना साहेब अपने विश्राम की बात भूल गये और बहुत ही आनंदित होते हुए भवन में प्रवेश किया। लक्ष्मीबाई बहुत ही खुश होती हुई आयीं और झुककर नाना साहेब के पैरों का स्पर्श करने ही वाली थी, उन्होंने ऐसा करने से

रोका और आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा "कहीं मैं सपना तो देख नहीं रहा हूँ। तुम यहाँ कैसे आयी?" हँसते हुए उन्होंने पूछा। "इस प्रश्न का समाधान हज़ारों सालों के पहले ही सतीदेवी दे चुकी हैं। बड़े भैय्या, जब सतीदेवी को मालूम हुआ कि उसके पिता यज्ञ कर रहे हैं तो तुरंत मायका जाना चाहती थीं। परमशिव ने उससे पूछा कि बिन बुलाये जाना क्या अच्छा है? क्या आप जानते हैं, सतीदेवी ने इस प्रश्न का क्या उत्तर दिया?" लक्ष्मीबाई ने पूछा।

"नहीं जानता" नाना साहेब ने कहा।

"पिता के घर जाने के लिए पुत्री को किसी के बुलावे की आवश्यकता नहीं है।" सतीदेवी ने कहा। जहाँ तक मेरी बात है, पिता और भाई के घर के विषय में कोई भेद नहीं" लक्ष्मीबाई ने हँसते हुए कहा।

"बहन, इस भाई का घर ही नहीं, बल्कि इस भाई की समस्त संपदाएँ तुम्हारी हैं। इतनी दूर तक कष्ट उठाकर आने की क्या ज़रूरत है? संदेश भेजती तो मैं स्वयं उपस्थित हो जाता" नाना साहेब ने कहा।

"अपने भाई को देखना कष्टदायक कार्य समझूँ तो उन दुष्ट गोरों का कैसे सामना कर सकूँगी। आपने स्वयं मुझे धनुर्विद्या सिखायी, तलवार चलाना सिखाया। क्या अपनी बहन को इतनी सुकुमारी समझ रहे हैं?" कहकर लक्ष्मीबाई ने पीछे मुड़कर देखा। देखा कि एक दूत दौड़ा-दौड़ा वहाँ आया और कहने लगा "मेरठ में विद्रोह का आरंभ हो गया।" नाना साहेब ने चकित होकर पूछा "इतनी जल्दी।"

"चर्बी लेपे गये कारतूसों का इस्तेमाल करना अनिवार्य घोषित किया गया। सिपाहियों ने गोरों की इस घोषणा का विरोध किया, उसे तिरस्कृत कर दिया। फिर गोरों ने शिबिरों में जितने भी सिपाही थे, उन सबके हाथों में हथकड़ियाँ लगा दीं। पाँच साल की कैद की कड़ी सज़ा सुनायी गयी और सभी को जेलों में ठूँस दिया।" दूत ने हड़बड़ाते हुए कहा।

"फिर?" नाना साहेब ने पूछा।

"दूसरे दिन की रात को सिपाहियों ने बग़ावत की। उन्होंने क़ैदी सिपाहियों को छुड़ाया। गोरों के घरों को जला दिया। नगर में अग्नि-ज्वालाएँ आसमान को छू रही हैं" दूत ने कहा।

- सशेष
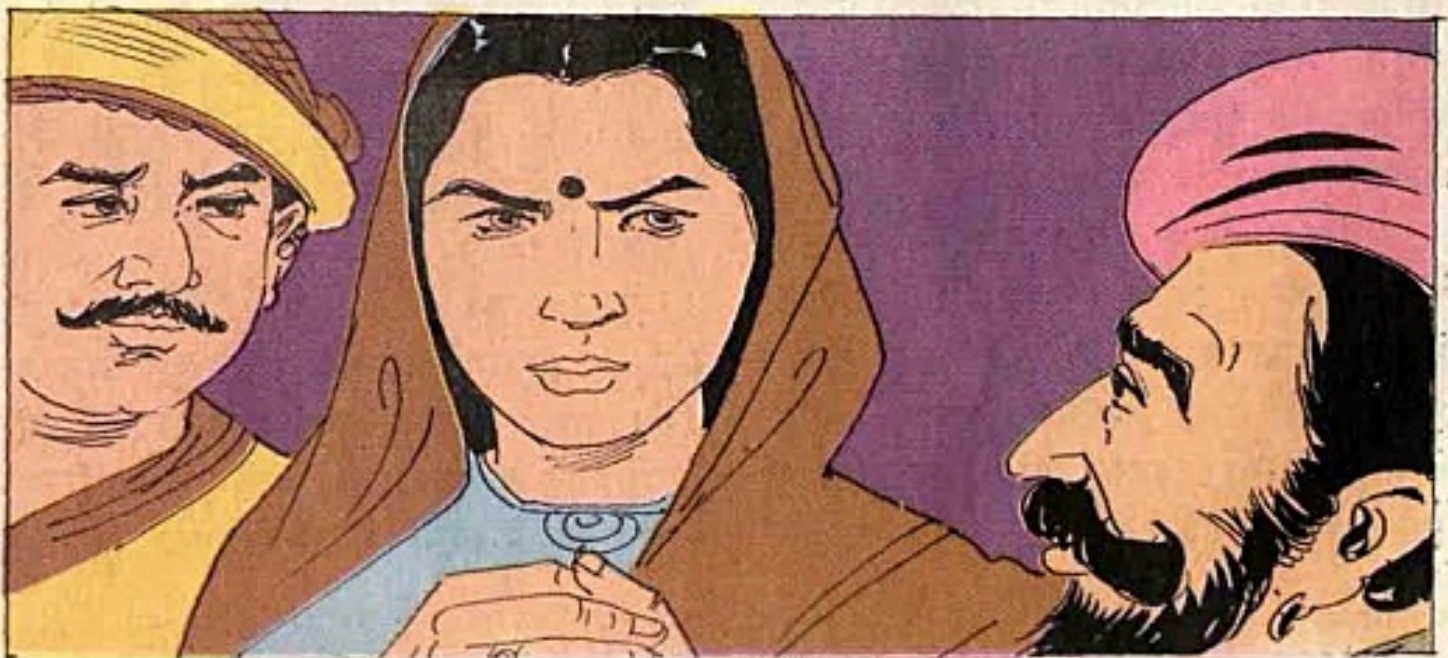
पुण्य क्या है?

शाम को रसोई के काम से निवृत्त होकर, घर के सामने फूलों के पौधों के बीच में बैठकर, फूलों की माला गूँथ रही थी कमला। इतने में घोड़े की गाड़ी आकर घर के सामने रुकी।

चमकीली साड़ी पहने, गले भर में गहनों से लदी गाड़ी से उतरी विमला को देखकर कमला चकित रह गयी।

कमला और विमला दोनों देवरानियाँ हैं। सास-ससुर के मर जाते ही दोनों ने पतियों के बीच झगड़े खड़े कर दिये और दोनों भाइयों को एक साल के अंदर ही अलग-अलग कर दिया। विमला के पति ने व्यापार किया। धनी बनने के लिए उसने दूसरों को धोखा दिया, दगाबाजी की, बेईमानी की और वह सब कुछ किया, जो करना नहीं चाहिये। चार सालों के अंदर ही उसने बहुत धन कमाया। शहर के धनियों में से वह एक है। शायद हो सकता है, कमला का पति अपनी अच्छाई और ईमानदारी को छोड़ नहीं पाया, इसलिए अब भी वह जैसा था, वैसा ही रह गया। न ही अपना खेत बढ़ा सका और न ही व्यापार करके कमा सका।

जब से विमला के जीवन में कायापलट हो गया, तब से वह कमला के घर बहुत ही कम आने लगी। अचानक ही आज आयी विमला को देखकर आश्चर्य-भरे स्वर में कमला ने कहा ''आओ दीदी, तुम्हें देखे बहुत दिन हो गये।'' उसने उठकर उसका स्वागत किया।

विमला ने फूलों के पौधों और घर के दरवाजे को ग़ौर से देखते हुए कहा ''सब कुशल हैं न? नयी मरम्मतें करवाकर दुर्गा देवी का मंदिर बहुत ही अच्छी तरह से सजाया गया है। मैं वही मंदिर जा रही थी। सोचा कि तुम्हें भी साथ लेती चलूँ।''

''ज़रूर आऊँगी'' कहकर कमला घर के अंदर गयी और चार-पाँच मिनिटों में लौट आयी। दोनों गाड़ी में बैठीं। गाँव के कोने

सीमा श्रीवास्तव

में देवी का मंदिर था। वहाँ पहुँचते-पहुँचते अंधेरा छा गया। रंग-बिरंगे दीपों से अलंकृत था वह मंदिर।

विमला को देखते ही मंदिर का धर्मकर्ता स्वयं आगे बढ़ा और उन्हें अंदर ले गया। मंदिर की दीवार पर सबसे पहले संगमरमर के पथ्थर पर विमला का नाम जड़ा हुआ था। विमला ने अपना नाम दिखाते हुए कमला से कहा "साठ हज़ार रुपयों के आभूषण बनवाये देवी के लिए। इसी वजह से दीवार पर विशेष रूप से मेरा नाम जड़ा गया है।"

अब कमला को यह जानने में देर नहीं लगी कि उसकी जेठानी ने जान-बूझकर उसे यहाँ ले आने का कष्ट क्यों किया? देवी की मूर्ति के पास जाती हुई विमला ने कहा "आज हम ज़िन्दा हैं। क्या पता, कल ज़िन्दा रहेंगे या नहीं? ऐसे पुण्य-कार्य करते रहेंगे तो हमारा नाम शाश्वत रूप से रह जायेगा। सब हमें याद रखेंगे।"

तब धर्मकर्ता ने हस्तक्षेप करते हुए कहा "देवी के लिए आपकी देवरानी कंकण बनवायेंगी तो अच्छा होगा। ज़्यादा से ज़्यादा पचास हज़ार रुपये लगेंगे। आपके नाम के बग़ल में ही उनका भी नाम जड़ा देंगें।"

उसकी बातें सुनने के बाद कमला सोच में पड गयी। एक और महीने के बार फ़सल बेचने पर पच्चीस हज़ार रुपये हाथ आयेंगे। पति को किसी तरह मनाकर, विमला के नाम के बग़ल में ही अपना भी नाम जड़वाने का उसने निश्चय किया।

उसने धर्मकर्ता से कहा "उतना खर्च कर नहीं सकूँगी। पच्चीस हज़ार का एक हार बनवाकर देवी के गले में डालूँगी।"

विमला ने तुरंत कहा "मेरी बहन का नाम मेरे ही नाम के नीचे जड़वाना चाहिये। याद रखिये, नाम अच्छी तरह से दिखायी पडे। उसने 'मेरे नाम के ही नीचे' पर ज़ोर देते हुए कहा। बाद उसने कमला को उसके घर पर उतार दिया और पानी भी पिये बिना चली गयी।

थोड़े दिनों के बाद जब फ़सल बिकी और पच्चीस हज़ार मिल गये, अब उसके दूसरे ही दिन पति का चाचा गाँव से आया।

कमला को बातों-बातों में मालूम हुआ कि उसके पति ने ही अपने चाचा को यहाँ बुलवाया तो उसने पति से कहा "अब अपने चाचा को बुलाने की ज़रूरत क्या आ पड़ी? उनकी तबीयत भी तो आजकल ठीक नहीं रहती?"

"चाचाजी को फिर से दिल का दौरा पड़ा है। खर्च जितना भी हो जाए, अच्छी चिकित्सा करानी चाहिये। अगर वे नहीं रहे तो उनके परिवार की दुर्गति होगी। बच्चों को दर-दर भटकता फिरना होगा। तीन अविवाहित कन्याओं के पिता हैं। लगता है, बड़ी लड़की की शादी तय हो जायेगी। पर हाँ, अगर दस हज़ार रुपये दहेज में दे सकें। तो इसीलिए इस बार फ़सल की रक़म चाचाजी के सुपुर्द करनेवाला हूँ, जिससे वे अच्छी चिकित्सा करा सकें और बेटी की शादी भी करा सकें। वे किश्तों में पैसा चुकाना चाहते हैं, पर शायद ही यह संभव है।" यों उसने स्पष्ट कर दिया कि उसके चाचा किस काम पर यहाँ आये।

यह सुनते ही कमला चिढ़ती हुई बोली, "तुम कैसी बातें कर रहे हो? क्या हमारे पास लाखों रुपये पड़े हुए हैं, जिनमें से उन्हें पच्चीस हज़ार रुपये मुफ़्त में दे दें। यह रक़म इस बार मुझे चाहिये।"

"तुम्हें पच्चीस हज़ार रुपयों की ज़रूरत है?" कमला के पति ने आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा।

"मैंने वचन दिया कि देवी के लिए हार बनवाऊँगी। मंदिर की दीवार पर दीदी विमला के नाम के साथ-साथ मेरा नाम भी जोड़ेंगें।" उसने पूरी बात अपने पति से कही।

"देवी के गले में अब हार न हो तो क्या आकाश भूमि पर गिर जायेगा, धरती फट जायेगी? पहले चाचा की बेटी के गले में मंगलसूत्र चाहिये। नाम दीवारों और पथ्थरों पर नहीं, साथ जीनेवाले मनुष्यों के दिलों पर जड़ने चाहिये। इनकी सहायता करोगी तो

उस घर के सब लोग हर दिन तुम्हारा नाम लेकर पूजेंगे, घर में तुम्हारे नाम पर दीप जलायेंगे"। यों उसने अनेकों प्रकारों से कमला को समझाने की कोशिश की।

"आप जो भी कहना चाहते हैं, कहते जाइये, मुझे सुनना नहीं है। कहिये, कौन ऐसा है, जो कहेगा कि मंदिर को दान देना पुण्य-कार्य नहीं है?" कमला ने नाराजी से पूछा।

उनकी इस बातचीत के बाद कमला का पति घर से बाहर आया। उसे उसका चाचा कहीं दिखायी नहीं पड़ा। उसने पत्नी से कहा "हमारी बातों ने उनके दिल को ठेस पहुँचायी होगीं, इसीलिए चाचा चुपचाप खिसक गये।" दर्द-भरे स्वर में उसने कहा।

"उनके चले जाने से हमें कोई कष्ट या नष्ट नहीं हुआ। आज शाम को वह रक़म

मंदिर में दे आऊँगी'' कमला ने कहा।

उस दिन शाम को पच्चीस हज़ार रुपये थैली में रखकर कमला मंदिर गयी। उस मंदिर के पुजारी से मालूम हुआ कि धर्मकर्ता किसी ज़रूरी काम पर गाँव में गये हैं और जल्दी ही लौटनेवाले हैं।

कमला ने देवी का दर्शन किया और मंदिर के पीछे गयी। अंधकार छाया हुआ था। एक तरफ़ कनेर पेड़ के नीचे कोई साधु ध्यान-मग्न था। दूसरी तरफ़ चबूतरे पर कोई बूढ़ी स्त्री बैठी हुई थी।

कमला को देखते ही पास बुलाकर उसने कहा ''मेरी एक मदद करो बहन। इस टोकरी में लड्डू और फल हैं। इन्हें बाँट देना। मेरी कमर झुक गयी। मुझमें इतनी ताक़त नहीं कि मैं खुद यह काम कर सकूँ।''

''धर्म-दान कर रहीं हैं। पुजारी से कहेंगी तो आपका नाम काले बोर्ड पर लिख देगा। अपना नाम बताइये।'' कमला ने पूछा।

उसकी बातों पर बूढ़ी ज़ोर से हँसकर बोली ''यह जरूरी है कि ऐसा काम करें, जिससे सबका भला हो। बोर्ड पर लिखने से क्या फ़ायदा? कोई पूछे तो बता देना, दुर्गा ने बाँटने को कहा। जो भी काम करें, उससे हमें तृप्ति मिले, नाम नहीं''।

वे बातें चाबुक की मार की तरह लगीं कमला को। उसने धीमे स्वर में पूछा, ''क्या मंदिर में जितने भी भक्त हैं, सब को दूँ?''

''पहले मंदिर के सामने जो भूख से तड़प रहे हैं, उनमें बाँटो। बाद भी अगर कुछ बच जाए तो उसे भक्तों में बाँटो। हम जो भी सहायता पहुँचाना चाहते हैं, उन्हें पहुँचाना, जिन्हें उसकी ज़रूरत है। हमसे जो भी हो सके, हम करें।'' उस बूढ़ी स्त्री ने कहा।

कमला कोई उत्तर दे नहीं सकी। उस बूढ़ी के कहे अनुसार ही उसने किया, और फिर मंदिर के पीछे आयी। चबूतरे पर वह बूढ़ी स्त्री दिखायी नहीं पड़ी। शायद साधु का ध्यान पूर्ण हो गया, इसलिए वह भी वहाँ से उठकर जाने लगा। उसने साधु से उस बूढ़ी स्त्री के बारे में पूछा।

साधु ने चकित होकर पूछा ''क्या उसी बृद्धा के बारे में पूछ रही हो न, जिसके मस्तक पर कुंकुम की बड़ी बिंदी थी और जो लाल साड़ी पहनी हुई थी?''

''हाँ, उन्हीं के बारे में पूछ रही थी। नाम उनका दुर्गा था।'' कमला ने कहा।

''देवी, तुम बड़ी ही पुण्यात्मा हो। तुमने

साक्षात् उस दुर्गा माता का दर्शन किया। इसके पहले भी एक-दो ने देवी को उसी रूप में देखा। मैं यहाँ हर दिन ध्यान में लगा रहता हूँ। किन्तु आज तक मुझे उनका दर्शन-भाग्य नहीं मिला। उस देवी की कृपा के पात्र बनी हो। सचमुच तुम बड़ी ही भाग्यशाली हो।'' मंदिर की ओर देखते हुए आँख मूँदकर हाथ जोड़ते हुए साधु ने कहा।

कमला का शरीर आनंद से सिहर उठा। उस बूढ़ी स्त्री की बातें उसके कानों में प्रतिध्वनित होने लगीं। उस दुर्गा माता ने परोक्ष रूप से उससे बताया कि दीवारों पर नाम जड़वाना प्रधान नहीं है। प्रधान तो उन ग़रीबों की सहायता करनी है, जो कष्टों में फंसे हुए हैं, विपत्तियों से घिरे हुए हैं। इसका अर्थ हुआ कि देवी के लिए सोने का हार बनवाना मुख्य नहीं है। मुख्य तो अपने पति के चाचा की सहायता करनी है, जिसके परिवार को सहायता की नितांत आवश्यकता है। देवी ने स्वयं उससे यह बात बतायी।

कमला धर्मकर्ता के लिए नहीं रुकी। तुरंत घर गयी और अपने पति को धन की थैली सौंपती हुई कहा ''यह धन अपने चाचा की चिकित्सा और उनको पुत्री के विवाह के लिए खर्च कीजिये।''

एक महीने के अंदर ही चाचा की पुत्री के विवाह का निमंत्रण-पत्र अपने दोस्त व उसकी पत्नी को देते हुए कमला के पति ने कहा ''यह शुभ समाचार सुनाने मात्र के लिए आपको यह निमंत्रण-पत्र दे रहा हूँ। आपने वेष बदलकर बड़ा उपकार किया। आपको देखेंगी तो हो सकता है, वह आपको पहचान जाए। शायद जान जाये कि आप ही दुर्गा और साधु हैं। वह नाम के पीछे पागल न होकर ऐसे ही अच्छे काम करती रहेगी तो सभी के लिए अच्छा है। इससे वह भी शांत रह सकेगी और मुझे भी शांत रहने देगी।''

''हमें डर है कि देवी के नाम पर हमने अपराध किया।'' निमंत्रण-पत्र पढ़ते हुए दंपति ने कहा।

''एक कन्या का विवाह कराने और एक रोगी की चिकित्सा कराने के लिए आपने यह नाटक किया। यह काम करके आपने बड़ा पुण्य-कार्य किया। यह पुण्य-कार्य सदा आपकी रक्षा करता रहेगा।'' कमला के पति ने हँसते हुए कहा।

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता : : पुरस्कार रु. १००

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, जनवरि, १९९८ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी ।

DHARM NATH PRASAD

DHARM NATH PRASAD

* उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। * '२५ नवम्बर,९७ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। * अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा। * दोनों परिचियोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास - २६.

सितम्बर, १९९७ की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **आनेवाली है मंज़िल**

दूसरा फोटो : **लगनेवाली है महफ़िल**

प्रेषक : **शिव भगत राम**

हरिजन विद्यालय, सदर बाज़ार, बैरकपुर, उत्तर चौबीस परगना पिन - ७४३ १०१ (पश्चिम बंगाल)

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Pvivate Ltd., Chandamama Building, Chennai- 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, 188, N.S.K.Salai, Vadapalani, Chennai- 600 026 (India) Editor : NAGI REDDI.

THE MOST ENDEARING GIFT YOU CAN THINK OF
FOR YOUR NEAR AND DEAR WHO IS FAR AWAY
CHANDAMAMA
Give him the magazine in the language of his choice—
Assamese, Bengali, English, Gujarati, Hindi, Kannada,
Malayalam, Marathi, Oriya, Sanskrit, Tamil or Telugu
—and let him enjoy the warmth of home away from home.
Subscription Rates (Yearly)
AUSTRALIA, JAPAN, MALAYSIA & SRI LANKA
By Sea mail Rs 129.00 By Air mail Rs. 276.00
FRANCE, SINGAPORE, U.K., U.S.A.,
WEST GERMANY & OTHER COUNTRIES
By Sea mail Rs 135.00 By Air mail Rs. 276.00
Send your remittance by Demand Draft or Money Order favouring
'Chandamama Publications' to:
CIRCULATION MANAGER CHANDAMAMA PUBLICATIONS CHANDAMAMA BUILDINGS
VADAPALANI CHENNAI - 600 026

CHANDAMAMA (Hindi) November 1997 Regd. No. M. 54[illegible]/97
RN 1087 / 57